मई १९७९

तिरुमल-तिरुपति देवस्थान की मास-पत्रिका

TIRUMALA TIRUPATI DEVASTHANAMS

श्रीवेङ्कटेश्वरस्वामीजी का मन्दिर, तिरुमल.

१-३-७९ से

दैनिक पूजा एवं दर्शन का कार्यक्रम

शनि, रवि, सोम तथा मंगलवार

	समय	सेवा
प्रात	3–00 से 3–30 तक	सुप्रभात
,,	3-30 ,, 3–45 ,,	शुद्धि
,,	3–45 ,, 4–30 ,,	तोमालसेवा
,,	4–30 ,, 4–45 ,,	कोलुवु तथा पचागश्रवण
,,	4–45 . 5–30 ,,	पहली अर्चना
,,	5–30 ,, 6–00 ,,	पहलीघटी तथा सात्तुमोरै
,,	6–00 , 12–00 ,,	**सर्वदर्शन**
दोपहर	12–00 ,, –00 ,,	दूसरी अर्चना
,,	1–00 ,, 8–00 ,,	**सर्वदर्शन**
रात	8–00 ,, 9–00 ,,	शुद्धि तथा रात का कैंकर्य
,,	9–00 ,, 1 –00 ,,	**सर्वदर्शन**
,,	12–00 ,, 12–30 ,,	शुद्धि
,,	12–30	एकान्त सेवा

सहस्र कलशाभिषेक के कारण बुधवार

	समय	सेवा
प्रात	3–00 से 3–30 तक	सुप्रभात
,,	3–30 ,, 3–45 ,,	शुद्धि
,,	3–45 ,, 4–30 ,,	तोमाल सेवा
,,	4–30 ,, 4–45 ,,	कोलुवु तथा पचाग श्रवण
,,	4–45 ,, 5–30 ,,	पहली अर्चना
,,	5–30 ,, 6–00 ,,	पहलीघटी तथा सात्तुमोरै
,,	6–00 ,, 8–00 ,,	सहस्र कलशाभिषेक
,,	8–00 रात 8–00 ,,	**सवदर्शन**
रात	8–00 ,, 9–00 ,,	**शुद्धि**
,,	9–00 ,, 12–00 ,,	**सर्वदर्शन**
,,	12–00 ,, 12–30 ,,	शुद्धि

तिरुप्पावडा के कारण गुरुवार

	समय	सेवा
प्रातः	3–00 से 3–30 तक	सुप्रभात
,,	3–30 ,, 3–45 ,,	शुद्धि
प्रात	3–45 से 4–30 तक	तोमाल सेवा
,,	4–30 ,, 4–45 ,,	कोलुवु, तथा पचागश्रवण
,,	4–45 ,, ‘–30 ,,	पहली अर्चना
,,	5–30 ,, 6–00 ,,	पहली घटी, बाली तथा सात्तुमोरै
,,	6–00 ,, 8–00 ,,	सडलिपु, दूसरी अर्चना तिरुप्पावडा, अलकरण घटी इत्यादि
,,	8–00 रात 8–00 ,,	**सर्वदर्शन**
	,, 10–00 ,,	शुद्धि इत्यादि पूलगि समर्पण रात का कैंकर्य, घटी
,,	10–00 ,, 12–30 ,,	पूलगि सेवा (अर्जित)
,,	12–30 ,, 12–45 ,,	**शुद्धि**
,	12–45	एकात सेवा

अभिषेक के कारण शुक्रवार

	समय	सेवा
प्रात	3–00 से 3–30 तक	सुप्रभात
,,	3–30 ,, 5–00 ,,	सडलिपु का नित्य कैंकर्य (एकात)
,,	5–00 ,, 7–00 ,,	अभिषेक (अर्जित)
,,	7–00 ,, 8–30 ,,	समर्पण
,,	8–30 ,, 9–30 ,,	तोमाल सेवा अर्चना, घटी बालि तथा सात्तुमोरै
,,	9–30 ,, 10–00 ,,	दूसरी घटी, सात्तुमोरै
,,	10–00 रात 8–00 ,,	**सर्वदर्शन**
रात	8–00 ,, 9–00 ,,	शुद्धि, रात का कैंकय
,,	9–00 , 12–00 ,,	**सर्वदर्शन**
,,	12–00 ,, 12–30 ,,	**शुद्धि**
,,	12–30	एकात सेवा

सूचना १ उक्त कार्यक्रम किसी त्योहार तथा विशेष उत्सव दिनो के अवसर पर समयानुकूल बदल दिया जायगा। २. सुप्रभात दर्शन केलिए सिर्फ रु २५/– टिकेटवालो को ही अनुमति मिलेगी। ३. रु २५/– के टिकेट तिरुमल मे तथा आन्ध्रा बैंक के सभी शाखाओ मे मिलेगी। ४ सेवानंतर टिकेट को रद्द कर दिया गया। ५. प्रत्येक दर्शन के टिकेटवालो को पहले के जैसे ध्वजस्थभ के पास से नही, बल्कि महाद्वार से क्यू मे मिलाया जायगा। ६. रु २००/– के अमत्रणोत्सव टिकेट पर दो ही व्यक्तियो को भेजा जायगा। ७ अर्चना, तोमाल सेवा, एकातसेवा मे दर्शनानंतर टिकेट या रु. २५/– का टिकेट नही बेचा जायेगा।

—पेष्कार, श्री बालाजी का मदिर, तिरुमल.

तुल्यनिंदास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः ॥

भगवान श्री कृष्ण अर्जुन को उपदेश देते हुए कहते हैं कि जो निंदा-स्तुति को समान समझनेवाला और मननशील है, अर्थात् ईश्वर के स्वरूप का निरंतर मनन करनेवाला है एवं जिस किस प्रकार से भी शरीर का निर्वाह होने में सदा ही संतुष्ट है और रहने के स्थान में ममता से रहित है, वह स्थिर बुद्धिवाला, भक्तिमान् पुरुष मेरे को प्रिय है ।

(श्री मद्भगवद्गीता, १९ की श्लोक, द्वादशोऽध्याय ।)

तिरुमल–यात्रियों को सूचनाएं

कलियुगवरद भगवान बालाजी ससार के कोने कोने से अगणित भक्तों को अपनी ओर आकृष्ट करते हैं। हर रोज हजारों भक्त कलियुगवैकुण्ठ तिरुमल का दर्शन कर पुनीत होते हैं। तिरुपति तथा तिरुमल पहुंचनेवाले इन असंख्य भक्तगणों की सुविधा (यातायात, आवास, बालाजी का दर्शन इत्यादि) केलिए ति. ति. देवस्थान उत्तम प्रबन्ध कर रहा है। इन सुविधाओं के अतिरिक्त यात्रियों के भोजन की समस्या की ओर भी ध्यान दिया जा रहा है। देवस्थान की ओर से भोजनशालाओं की व्यवस्था तो है ही है उसके अतिरिक्त तिरुमल पर अन्य भोजनशालाएं भी है जिन में भोजन पदार्थों की दरें ति ति. देवस्थान के द्वारा नियंत्रित की जाती हैं। अतएव यात्रियों से निवेदन है कि वे इन भोजन सुविधाओं का उपयोग करें।

तिरुमल पर भोजन सुविधाएं

ति. ति. देवस्थान का अतिथि गृह

जलपान	(समय)	प्रातः ६ बजे से	९ बजे तक
		दोपहर ३ ,,	शाम ६ ,,
भोजन	,,	प्रातः ११ ,,	दोपहर २ ,,
		रात ७ ,,	रात ९ ,,

यहां पर मिठाई, नमकीन, चाय, काफी इत्यादि पदार्थ उपलब्ध हैं।

भोजन (full) रु. ३–००

जो लोग यहां से भोजन अथवा जलपान प्राप्त करना चाहते हैं उनको नियमित समय के तीन घंटे के पूर्व ही आर्डर (order) देना चाहिए।

काफी बोर्ड (कल्याणकट्टा के पास)

यहा पर केवल जलपान प्राप्त कर सकते हैं।
समय – प्रातः ५ बजे से रात १० बजे तक

काफी बोर्ड (क्यू शेड्स के पास)

यहा पर दहीभात, हल्दीभात तथा शीत पेय प्राप्त होते हैं।
समय प्रातः ५ बजे से रात १० बजे तक

टी बोर्ड (ए. टी. काटैज के पास)

यहां पर चाय तथा बिस्कुट प्राप्त होते हैं।
समय : प्रातः ५ बजे से रात ९ बजे तक

अन्नपूर्णा भोजनालय

यहां पर अनेकविध मिठाई, नमकीन आइस क्रीम, शीत तथा गरम पेय प्राप्त होते हैं।
(समय) प्रात : ५ बजे से रात १० बजे तक

भोजन समय – प्रात : ९ बजे से शाम ३ बजे तक
तथा
शाम ६ बजे से रात १० बजे तक

भोजन (थाली)	रु १–७५
अतिरिक्त प्लेट भात	रु. ०–६०
भोजन (full)	रु. ३–००

वुडलॉड्स (ति.ति.दे. के अतिथिगृह के पास)

यहां पर जलपान, भोजन, शीत तथा गरम पेय प्राप्त होते हैं।

जलपान (समय) प्रातः ६ बजे से रात १० बजे तक
भोजन ,, प्रातः ११ बजे से दोपहर २–३० बजे तक

मद्रास भोजन	रु. ४–००
उत्तर भारतीय भोजन	रु. ६–००
प्लेट भोजन	रु. १–७५

तिरुपति में देवस्थान का भोजनालय

ति. ति देवस्थान का भोजनालय (पहली धर्मशाला)

समय प्रातः ५ बजे से रात ९ बजे तक

यहां पर जलपान, आम्प्रो बिस्कुट तथा शीत और गरम पेय प्राप्त होते हैं।

ति. ति. देवस्थान का भोजनालय (दूसरी धर्मशाला)

यहां पर जलपान, भोजन, शीत तथा गरम पेय प्राप्त होते हैं।

जलपान	(समय)	प्रातः ५ बजे से	प्रातः ९–३० बजे तक
		दोपहर २–३० ,,	शाम ६ बजे तक
भोजन	,,	प्रातः १०–३० ,,	दोपहर २ बजे तक
		६–३० ,,	रात ८ ,,

प्लेट भोजन	रु. १–५०
अतिरिक्त भात (३५० ग्राम)	रु. १–००
दही	रु. ०–४०

सप्तगिरि
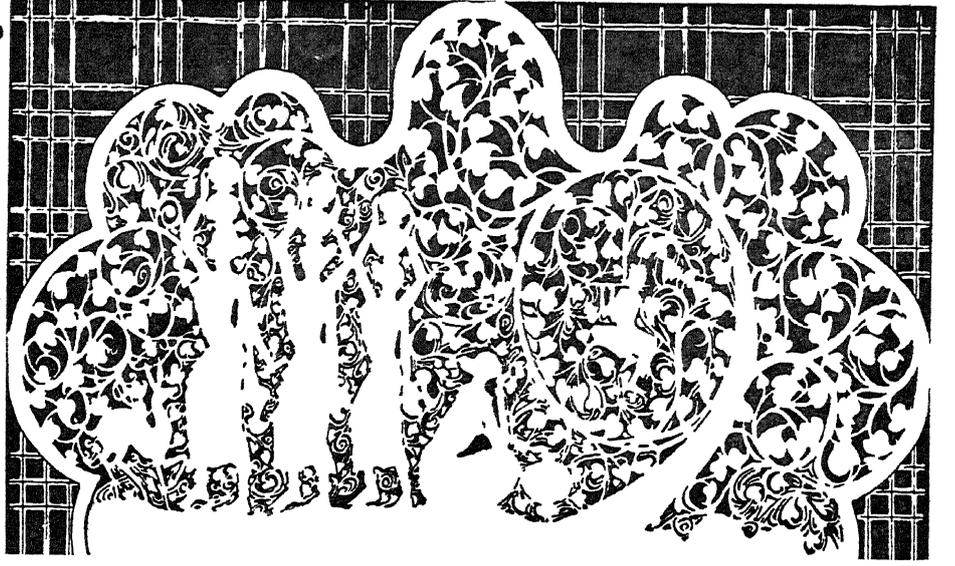
मई १९७९ वर्ष ९ अंक १२

एक प्रति .... रु. ०-५०
वार्षिक चंदा .... रु. ६-००

गौरव सपादक
श्री पी. वी आर. के. प्रसाद
आइ. ए यस्,
कार्यनिर्वहणाधिकारी, ति. ति. दे. तिरुपति
दूरवाणी २३२२.

सपादक, प्रकाशक
के. सुब्बाराव, एम. ए.,
तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति
दूरवाणी २२५४.

मुद्रक
एम्. विजयकुमाररेड्डी,
मनेजर, टी. टी. डी. प्रेस्, तिरुपति.
दूरवाणी २३४०.

मुखचित्र : श्री अन्नमाचार्य की आध्यात्मिक संकीर्तन "मलसि चूडरो नरसिंहम्" का भाव चित्र – चित्रकार बापू

संपादकीय

समय गतिशील है। बिना रुके निरंतर चलनेवाले कालचक्र के परिभ्रमण में कई दिन, महीने, वर्ष तथा युग भी बीत जाते हैं। हर रोज सम्भव होनेवाली घटनाओं को सुनने या देखने में भी एक प्रकार का नयापन दिखाई पडता है। इसके निरंतर परिभ्रमण से कई परिवर्तन हो रहे हैं। इस परिवर्तन में एक प्रकार का नयापन तथा नयी चीजों में पुराने अनुभवों को लेना और नयापन को ढूँढते हुए आगे चलना ही कालचक्र का धर्म बन गया है।

इस संचिका से नौ वर्ष को पूरा करके और एक मोड लेनेवाली सप्तगिरि पत्रिका की प्रगति में भी काल चक्र का परिवर्तन स्पष्ट गोचर हो रहा है। क्लिष्ट तथा निगूढ धार्मिक विषयों को जन सामान्य तक पहुँचाने के उद्देश्य से ही नवबर, ७२ में इस विभाग को सप्तगिरि को लगाया गया। कालक्रमेण सप्तगिरि के आकार, विधान, आशय, तथा विषय-विश्लेषण आदि में परिवर्तन होने से, उत्तरदायित्व भी बढा। इसलिए सम्पादक तथा क्रय-विक्रय के दो अलग अलग विभाग सितंबर, ७६ में बनाये गये। इससे एक प्रकार का लाभ ही हुआ। लेकिन क्रय-विक्रय के मूल में रहने वाले अतर के कारण यह अनुभव हुआ कि दोनों में समन्वय लाना मुश्किल है। बाद में यह सोचा गया कि खासकर धार्मिक ग्रंथ विभाग में इस अंतर को निकालकर बराबर दृष्टि से काम करने वाले विभाग में स्थिर रखने से अवश्य उन्नति होगी। अतः क्रय-विक्रय विभाग को पुनः सप्तगिरि के सम्पादक विभाग को दिया गया है। अभी से इसका पूरा निर्वहण सप्तगिरि करनेवाली है। व्यवस्था पुराने होने पर भी, रुचियाँ तो नयी हैं।

बहुत पहले देवस्थान में ग्रंथ प्रचुरण के लिए आर्थिक सहायता एक स्वप्न जैसा दिखायी पडा। लेकिन अब योग्य लेखकों को रु० ५,००० तक आर्थिक सहायता दी जा रही है। और जो लेखक प्रकाशित कर चुके, उनकी ५० प्रतियों को भी खरीद रहा है। देवस्थान के द्वारा प्रकाशित करनेवाली पुस्तकों के लेखकों को पारितोषिक भी दिया जा रहा है।

वैसे ही धार्मिक लेखों के लिए आर्थिक सहायता अनावश्यक समझ कर कुछ समय पहले सप्तगिरि के लेखकों को दिये जानेवाले पारितोषिक रोका गया। लेकिन अब पहले से ज्यादा पारितोषिक मिल रहा है। तथा उनके लेखों की प्रतियों के साथ ४–५ प्रतियाँ भी मुफ्त में भेज दी जायेंगी। अज्ञात तथा क्लिष्ट धार्मिक बातों को सरल तथा सुबोध शैली में लोगों तक पहुँचाने के लिए कुछ प्रोत्साहक पुरस्कार देने का निर्णय लेना, अवश्य ही नयी रुचि होगी।

ऐसे कई प्रकार के परिवर्तनों से, प्रगति की ओर एक सीढी पर चलनेवाले शुभ समय में, सप्तगिरि विभाग वाहक होना, सब से बढकर पत्रिका के ऊपर अधिकारियों की श्रद्धा, इस रूप से सप्तगिरि को आस्तिक लोगों के निकट लाने का प्रयत्न ही है। फिर भी हम सब चलनेवाले हैं, चलानेवाले असल में वही हैं :—

"आनो भद्राणि यांतु ऋतवो विश्वतः।"

सकल देवता पूजा विधि

(गतांक से)

इन उपचारों को उपयुक्त मन्त्रो से संपन्न करना चाहिए।

१ छत्रं समर्पयामि - छत्र को समर्पित करता हूँ।
२. चामरं बीजयामि - चामर को समर्पित करता हूँ।
३. नृत्यं दर्शयामि - नृत्य को प्रदर्शित करता हूँ।
४ संगीतं श्रावयामि - गान को सुनाता हूँ।
५ वाद्यं घोषयामि - मंगल वाद्य को बजाता हूँ।
६. समस्त राजोपचारान् समर्पयामि } समस्त राजोपचारों को समर्पित करता हूँ

पहला परिशिष्ट

श्री वेङ्कटेश्वर सुप्रभातम्

१ कौसल्यासुप्रजाराम पूर्वासन्ध्या प्रवर्तते।
उत्तिष्ठ नरशार्दूल कर्तव्यं दैवमाह्निकम्॥
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज।
उत्तिष्ठ कमलाकांत त्रैलोक्यं मगलं कुरु॥

२ मातस्समस्त जगतां मधुकैटभारेः
वक्षोविहारिणि मनोहर दिव्यमूर्ते।
श्रीस्वामिनि श्रितजन प्रियदानशीले
श्रीवेंकटेशदयिते तव सुप्रभातम्॥

३. तव सुप्रभात मरविंदलोचने
भवतु प्रसन्न मुखचन्द्रमण्डले।
विधिशंकरेन्द्र वनिताभिरर्चिते
वृषशैलनाथ दयिते दयानिधे॥

४ अत्र्यादिसप्तऋषयस्समुपास्य संध्यां
आकाशसिंधु कमलानि मनोहराणि।
आदाय पादयुग मर्चयितु प्रपन्नाः
शेषाद्रिशेखर विभो तवसुप्रभातम्॥

५. पंचाननाब्जभव षण्मुख वासवाद्याः
त्रैविक्रमादि चरितं विबुधाः स्तुवंति।
भाषापति. पठति वासर शुद्धिमारात्
शेषाद्रिशेखर विभो तवसुप्रभातम्॥

६ ईषत्प्रफुल्ल सरसीरुह नारिकेल
पूगद्रुमादि सुमनोहर पालिकानाम्।
आवाति मंदमनिलः सह दिव्यगंधैः
शेषाद्रिशेखर विभो तव सुप्रभातम्॥

७. उन्मील्य नेत्रयुग मुत्तमपंजरस्थाः
पात्रावशिष्ट कदलीफल पायसानि।
भुक्त्वा सलीलमथ केलिशुकाः पठंति
शेषाद्रि शेखर विभो तव सुप्रभातम्॥

८. तंत्री प्रकर्षमधुरस्वनया विपंच्या
गायत्यनंत चरितं तव नारदोऽपि।
भाषासमग्र समकृत्कर करचार रम्यं
शेषाद्रिशेखर विभो तव सुप्रभातम्॥

९ भृंगावली च मकरंदरसानुविद्ध
झंकारगीतनिनदैः सह सेवनाय।
निर्यात्युपांत सरसीकमलोदरेभ्यः
शेषाद्रिशेखर विभो तव सुप्रभातम्॥

१०. योषागणेन वरदध्नि विमथ्यमाने
घोषालयेषु दधिमंथन तीव्रघोषाः।
रोषात्कलिं विदधते ककुभश्च कुभा।
शेषाद्रिशेखर विभो तव सुप्रभातम्॥

११. पद्मेशमित्र शतपत्र गतालिवर्गाः
हर्तुं श्रियं कुवलयस्य निजांगलक्ष्म्या।
भेरीनिनादमिव बिभ्रति तीव्रनादं
शेषाद्रिशेखर प्रभो तव सुप्रभातम्॥

१२. श्रीमन्नभीष्ट वरदाखिल लोकबन्धो
श्रीश्रीनिवास जगदेकदयैक सिंधो।
श्रीदेवतागृह भुजांतर दिव्यमूर्ते
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्॥

१३. श्रीस्वामि पुष्करिणिकाप्लवनिर्मलांगाः
श्रेयोर्थिनो हर विरिंचि सनंदनाद्याः।
द्वारे वसंति वरवेत्र हतोत्तमांगाः
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्॥

१४ श्रीशेषशैल गरुडाचल वेंकटाद्रि
नारायणाद्रि वृषभाद्रि वृषाद्रिमुख्याम्।
आख्यां त्वदीयवसते रनिशं वदंति
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्॥

१५. सेवापराः शिवसुरेशकृशानु धर्म
रक्षोऽम्बुनाथ पवमान धनाधिनाथाः।
बद्धांजलि प्रविलसन्निज शीर्षदेशाः
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्॥

१६. धाटीषु ते विहगराज मृगाधिराज
नागाधिराज गजराज हयाधिराजाः।
स्वस्वाधिकार महिमादिक मर्थयन्ते
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम्॥

१७. सूर्येंदुभौम बुधवाक्पति काव्य सौरि
स्वर्भानुकेतु दिविषत्परिषत्प्रधानाः।

तेलुगु मूल :
श्री एस. बी. रघुनाथाचार्य एम. ए.,
एस. वी. यूनिवर्सिटी, तिरुपति

त्वद्दासदास चरमावधि दासदासा
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

१८. त्वत्पादधूलि भरित स्फुरितोत्तमांगाः
स्वर्गापवर्ग निरपेक्ष निजांतरंगाः ।
कल्पागमाकलनयाऽऽकुलतां लभंते
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

१९ त्वद्गोपुराग्र शिखराणि निरीक्षमाणाः
स्वर्गापवर्गपदवीं परमां श्रयतः ।
मर्त्या मनुष्य भुवने मतिमाश्रयंते
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२०. श्रीभूमिनायक दयादिगुणामृताब्धे
देवाधिदेव जगदेकशरण्यमूर्ते ।
श्रीमन्ननत गरुडादिभिरर्चितांघ्रे
श्रीवेंकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२१ श्रीपद्मनाभ पुरुषोत्तम वासुदेव
वैकुण्ठ माधव जनार्दन चक्रपाणे ।
श्रीवत्सचिह्न शरणागत पारिजात
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२२ कन्दर्पदर्प हर सुन्दर दिव्यमूर्ते
कांताकुचांबुरुहकुड्मललोलदृष्टे ।
कल्याणनिर्मलगुणाकर दिव्यकीर्ते
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२३. मीनाकृते कमठकोल नृसिंह वर्णिन्
स्वामिन् परश्वथ तपोधन रामचन्द्र ।
शेषांशराम यदुनंदन कल्किरूप
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२४. एलालवग घनसार सुगन्ध तीर्थं
दिव्यं वियत्सरिति हेमघटेषु पूर्णम् ।
धृत्वाऽद्य वैदिकशिखामणयः प्रहृष्टाः
तिष्ठंति वेंकटपते तव सुप्रभातम् ।।

२५. भास्वानुदेति विकचानि सरोरुहाणि
सपूरयन्ति निनदैः ककुभो विहगाः ।
श्रीवैष्णवास्सततमर्थितमंगलास्ते
धामाश्रयंति तव वेकट सुप्रभातम् ।।

२६. ब्रह्मादयस्सुरवरास्समहर्षयस्ते
सतस्सनंदनमुखास्त्व योगिवर्याः ।
धामांतिके तव हि मंगलवस्तुहस्ताः
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२७. लक्ष्मीनिवास निरवद्यगुणैकसिन्धो
ससारसागर समुत्तरणैकसेतो ।
वेदांतवेद्य निजवैभव भक्त भोग्य
श्रीवेकटाचलपते तव सुप्रभातम् ।।

२८. इत्थंवृषाचलपते रिह सुप्रभात
ये मानवाः प्रतिदिनं पठितु प्रवृत्ताः ।
तेषां प्रभात समये स्मृतिरगभाजां
प्रज्ञां परार्थसुलभां परमा प्रसूते ।।

।। इति श्री वेंकटेश्वर सुप्रभातम् ।।
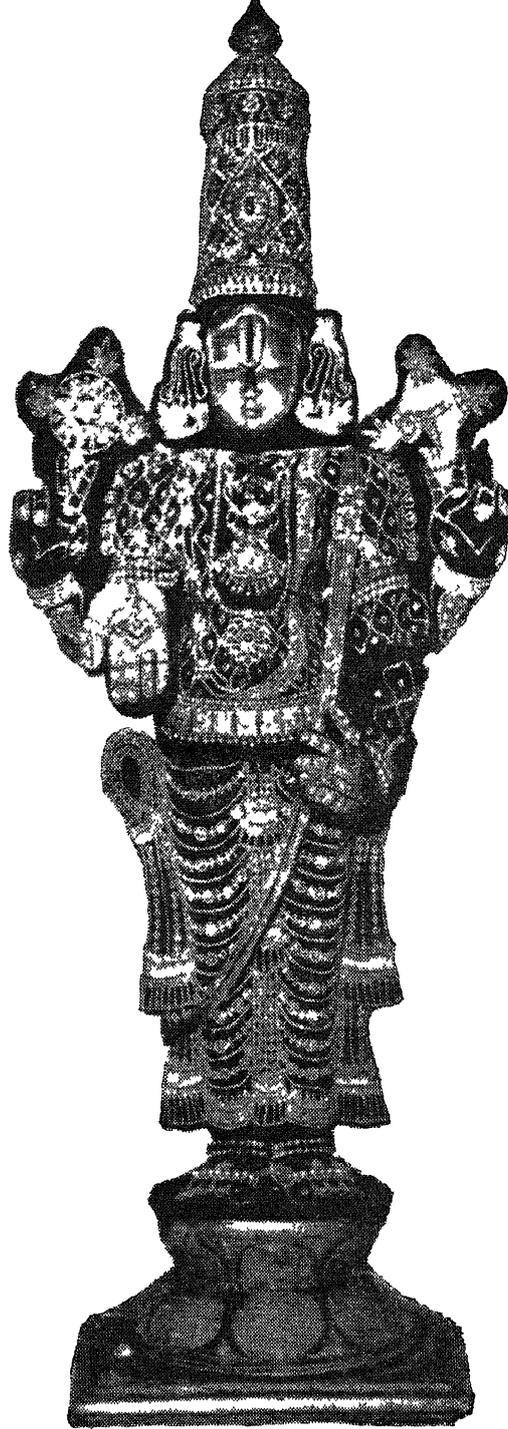
श्रीवेङ्कटेश स्तोत्रम्

१. कमलाकुचचूचुककुंकुमतो
नियतारुणितातुलनीलतनो ।
कमलायतलोचन लोकपते
विजयीभव वेंकटशैलपते ।।

२ सचतुर्मुखषण्मुखपंचमुख-
प्रमुखाखिलदैवतमौलिमणे ।
शरणागतवत्सल सारनिधे
परिपालय मा वृषशैलपते ।।

३ अतिवेलतया तव दुर्विषहैः
अनुदेलकृतैरपराधशतैः ।
भरितं त्वरितं वृषशैलपते
परया कृपया परिपाहि हरे ।।

४. अधिवेंकटशैलमुदारमते
जनताभिमताधिकदानरतात् ।
परदेवतया गदितान्निगमैः
कमलादयितान्न परं कलये ।।

५ कलवेणुरवावशगोपवधू
शतकोटिवृतात्स्मरकोटिसमात् ।
प्रतिवल्लविकाभिमतात्सुखदात्
वसुदेवसुतान्न परं कलये ।।

६. अभिराम गुणाकर दाशरथे
जगदेकधनुर्धर धीरमते ।
रघुनायक राम रमेश विभो
वरदो भव देव दयाजलधे ।।

७. अवनीतनया कमनीयकरं
रजनीकर चारुमुखांबुरुहम् ।
रजनीचरराजतमोमिहिरं
महनीयमहं रघुराममये ।।

८. सुमुखं सुहृदं सुलभ सुखदं
स्वनुजं च सुकायममोघशरम् ।
अपहाय रघूद्वहमन्यमह
न कथंचन कचन जातु भजे ।।

९ विना वेंकटेशं न नाथो न नाथः
सदा वेंकटेशं स्मरामि स्मरामि ।
हरे वेंकटेश प्रसीद प्रसीद
प्रियं वेंकटेश प्रयच्छ प्रयच्छ ।।

१०. अहं दूरतस्ते पदांभोजयुग्म
प्रणामेच्छयाऽऽगत्य सेवांकरोमि ।
सकृत्सेवया नित्य सेवाफलं त्वं
प्रयच्छ प्रयच्छ प्रभो वेंकटेश ।।

११. अज्ञानिना मया दोषानशेषान् विहितान् हरे।
क्षमस्व त्वं क्षमस्व त्वं शेषशैल शिखामणे ।।

।। इति श्री वेंकटेश स्तोत्रम् ।।

(पृष्ठ ३४ पर देखें)

विरह विदग्ध मथुरापति श्रीकृष्ण की मनोदशा?

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। उसे समाज में रहना होता है। अतः समाज की परम्पराओ, रीतिरिवाजो तथा मान्यताओं को पालन करने में उसे अपने बहुत से सुखो का बलिदान करना पड़ता है। वह इच्छा रखता हुआ भी जो चाहता है, कर नहीं पाता, अपने प्रियतम भी अपनी प्रेयसी से मिल नहीं पाता। अपने पद की मान-मर्यादा, समाज का बन्धन सामने आ जाता है।

मथुराधीश श्रीकृष्ण की भी यही हालत है। वह एक बार ब्रज में जाकर अपने बाल-सखाओ, ब्रज बनिताओ, गोपांगनाओ नंदबाबा एवं यशोदा से मिल आना चाहते है, ब्रज जाने की इच्छा उनमें बलवती हो उठती है, किन्तु, राजकाज की अधिकता के कारण वहाँ जाने का समय नहीं मिल पाता। यदि श्रीकृष्ण के मन का और बारीकी से अध्ययन किया जाय तो यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि मथुराधीश होकर अपने बचपन के सखाओ तथा गोपिकाओ से मिलना वे हीन समझते थे। फलतः वे अपने परम मित्र उद्धव को ब्रज में भेज कर वहाँ के समाचार से अवगत होना चाहते है। इसी बहाने वह अपने बाल सखाओ एवं राधा को सान्त्वना भी भेजते है।

उद्धव ब्रज पहुचते है। ब्रज के निकुंजो में गोपिकाएँ उन्हे घेर लेती है और श्रीकृष्ण चन्द्र का हाल पूछना प्रारम्भ कर देती है। वे जानना चाहती है कि श्रीकृष्ण गोकुल कब आयेंगे?

"ऊधो बोले समय-गति है गूढ़-अज्ञात बोडी।
क्या होवेगा कब यह नहीं जीव है जान पाता।
आवेंगे या न अब ब्रज में आ सकेंगे बिहारी।
हा! मीमांसा इस दुःख पगे प्रश्न की क्यों करूँ मै॥

किन्तु श्रीकृष्ण के मस्तिष्क में ब्रज की स्मृतियाँ हमेशा तरोताजी है—

"प्यारा वृन्दा-विपिन उनको आज भी पूर्व-सा है।
वे भूले हैं न प्रिय-जननी औ न प्यारे पिता को।
वैसी ही हैं सुरति करते श्याम गोपागना की।
वैसी ही है प्रणय-बालिका याद आती॥"

बिहारी सतसई में श्रीकृष्ण की मनोभावना कुछ इसी प्रकार अभिव्यक्त हुई है—
श्रीकृष्ण कहते है—

"सघन कुंज छाया सुखद शीतल मंद समीर
मन है जात अजौं वहै वा यमुना के तीर।"

यद्यपि वे मथुराधीश है, किन्तु आज भी उन का मन गोपिकाओ के साथ बिताए हुए दिनों की याद कर रस से आप्लावित हो जाता है। ब्रज के कुजो में, कालिंदी के तीर पर आज भी उनका मन घूमता रहता है। वे उनदिनों की याद कर विस्मृति में खो जाते है और उनका अन्तर्मन पुकार उठता है—'हाय कहाँ गए वे दिन? गोपियो की यादो के उजाले सदा उनके साथ है। गोपियो से उद्धव श्रीकृष्ण के बारे में कहते है—

साहित्यरत्न श्री अर्जुनशरण प्रसाद, एम ए.,
चक्रधरपुर.

"सायं-प्रातः प्रति-फल-घटी उन्हें याद आती।
सोते में भी ब्रज-अवनि का स्वप्न वे देखते हैं।
कुन्जों में ही मन मधुप सा सर्वदा घूमता हैं।
देखा जाता तन भर वहाँ मोहिनी-मूर्ति का है।"

उद्धव गोपियो को एक मीठी झिड़की देते है। वह कहते है कि उन लोगो में से किसी ने भी श्रीकृष्ण के प्रेम का सही आंकलन नहीं किया है। उनका प्रेम तो व्यक्ति से उठकर समष्टि हो गया है, आत्मा से विश्वात्मा हो गया है। गोपियो के प्रति प्रेम की परिणति श्रीकृष्ण में विश्व प्रेम के रूप में हो चुकी है। सक्षेप में इश्कमजाजी इश्कहकीको होगया है—

"ऐ संतप्ता-विरह-विधुरा गोपियों किन्तु कोई।
थोडा सा भी कुँवर-वर के मर्म का है न होता।
वे जी से हैं अवनिजन के हितैषी।
प्राणों से है अधिक उनको विश्व का प्रेम प्यास॥
"स्वार्थों को औ विपुल-सुख को तुच्छ देते बना हैं।
जो आजाता जगत-हित है सामने लोचनों के।
हैं योगी-सा दमन कर ये लोक सेवा निमित्त।
लिप्साओं से भरित उर की सैकड़ों लालसायें॥
ऐसे-ऐसे जगत-हित के कार्य हैं चक्षु आगे।
हैं सारें ही विषय जिनके सामने श्याम भूले
सच्चे जी से परम-व्रत के व्रती हो चुके हैं।
निष्कामी से अपर-कृति के कूल-वर्ती अतः हैं।
मीमांसा हैं प्रथम करते स्वीय कर्त्तव्य ही की।
पीछे वे हैं निरत उसमें धीरता साथ होते।
हो के वांछा-विवश अथवा लिप्त हो वासना से।
प्यारे होते न च्युत अपने मुख्य-कर्त्तव्य से हैं।"

इस तरह हम पाते है कि अन्त में श्रीकृष्ण का प्रेम भी विश्व-प्रेम में परिणत हो जाता है।

ति. ति. देवस्थान के विविध - मन्दिरों में अर्जित सेवाओं की दरें तथा कुछ नियम निम्नलिखित रूप से परिवर्तित की गयीं।

श्री पद्मावती देवी का मन्दिर, तिरुचानूर.

अर्चना	रु १–००
आरती	रु ०–५०

श्री गोविन्दराज स्वामी मन्दिर, तिरुपति.

तोमाल सेवा	रु ४–०० (एक टिकट)
अर्चना	रु ४–०० „
एकांतसेवा	रु ४–०० „
विशेष दर्शन	रु २–०० „

श्री बालाजी का मन्दिर, तिरुमल.

तिरुमल पर विराजमान श्री बालाजी के मन्दिर में अब तक रु २००/- चुकाकर मनानेवाली आर्जित सेवा में भाग लेने केलिए ६ व्यक्तियों को प्रवेश है। अब से केवल ५ व्यक्तियों को ही प्रवेश दे देने का निर्णय लिया गया।

ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

श्रवणभक्ति

(गतांक से)

उनके अनुसार अर्चन केलिए मंत्रानुष्ठान, स्नान सध्यावन्दन, जप तप आदि सहायक माने गये हैं। अर्चन करते विविध फल पुष्पो के साथ तुलसी की परम आवश्यकता है। सुनिये। गंगोदक भी उतना ही पवित्र है।

शुद्ध एव शांत मन सर्वाधिक है। पुरंदरदास की मान्यता है कि—

अ) ओल्लनो हरि कोल्लनो, एल्ल साधनविद्दु
तुलसी इल्लद पूजे।
कमल, मोल्लिगे, जापि, संपिगे, केदिगे
विमल घंटे, पंचवाद्यविद्दु।
अमल पंचभक्ष्य परमान्नविद्दु कमलनाथनु
श्री तुलसि इल्लद पूजे।

(कमल, मल्लिका, चंपक आदि सभी फूल हो, विमल घण्टानाद, तथा पांच तरह के वाद्यों का विधान हो, अमल पंच-भक्ष्य तथा परमान्न हो पूजा केलिए। इन सबसे की हुई पूजा भगवान को तब तक नहीं रुचती जब तक तुलसी से उनकी पूजा नहीं की जाती।)

आ) अपराध हत्तक्के अभिषेक उदक, अपराध
नूरक्के क्षीर हरिगे।
अपराध सहस्त्रक्के हालुमोसरुकणो अपराध
लक्षक्के धेनुघृत।
अपराधकोटिगे स्वच्छ जल अपराध अनत
क्षमेगे गंगोदक।
उपमे रहित नम्म पुरंदर विठलगे शांतमनवच्य
शांतवाक्य॥

दस अपराधो के लिए पानी से अभिषेक, सौ अपराधो केलिए दूध से, सहस्र अपराधो केलिए दधि से, लाख अपराधो केलिए मधु और घृत से करोड अपराधों केलिए दधि से, और अतरहित अपराधो केलिए गंगोदक से अभिषेक करने के विधान है। उपमातीत हमारे पुरंदर विट्ठल को तृप्त करने सब से अधिक सहकारी शात मन एवं शान्तवाक्य हैं।

पुरंदरदासजी का कहना है—भगवान भक्त-पराधीन हैं।

"हूवतरुवर मनेगे हुल्लुतरुव, अव्व लकुमीरमण
इवगिल्ल गरुव।
ओदु दल श्री तुलसी बिंदु गंगोदकवु इंदिरा-
रमण निनगर्पितवेनलु।
अदे मनदलि सिंधुशयन मुकुंद एने, एदेदु वा-
सिपना मंदिरदोलगे।
पांडवरमनेयोलगे कुदुरेगल तातोलेद पुंडरीकाक्ष
हुल्लुनुणिसिद
अंडजवाहन श्री पुरंदरविठलनुतोडरिगे तोड-
नागि संचरिसुतिहनु॥

(भगवान गर्वरहित हैं। वे पुष्प सौंपनेवाले के घरघास ले पहुचाते हैं। एक दल तुलसी और एक बूंद गंगोदक के अर्पण और निश्चल मन से "सिंधुशयन, मुकुंद" कहते ही इन्दिरारमण उस पूजक के मनमंदिर में हमेशा बसने लगेंगे)

पाण्डवों के घर में पुण्डरीकाक्ष रहकर घोड़ों को धोते थे और उनको घास खिलाते थे। गरुड-वाहन श्री पुरंदर-विट्ठल दासों के दास बनकर चलते हैं)

डा० एस. वेणुगोपालाचार्य,
माण्ड्या

अर्चना भक्ति में भगवान के अर्चावतार की सेवा के द्वारा उनकी सेवा का सुखानुभव मिलता है। भगवत् साक्षात्कार करने का वह सर्वोत्तम साधन है।

पादसेवन भक्ति

कबीरदास मूर्तिपूजा के विरोधी थे। तो भी कबीर भगवान के पादसेवन के प्रशंसक थे। पादसेवन की महिमा के बारे में कबीरदासजी का कथन है—

"भौ सागर अथाह जल, तामें बोहिथ राम
आधार।
कहे कबीर हम हरिसरन, तब गोपद खुर
विस्तार॥"

सूरदास की वाणी में पादसेवन का प्रताप देखें। यथा—

"गोविन्द पद भज मन बच क्रम करि, रुचि
रुचि सहज समाधि साधि सठ।
मिथ्या वाद विवाद छाँड सठ विषय लोभ
मद मोहे परिहरि।
चरन प्रताप आन उर अन्तर और सकल सुख
या सुखतर हरि॥"
दासि मीरा लाल गिरधर, अगम तारण तरण"

तिरुमल-यात्रियों को सूचनाएँ (केशसमर्पण)

केश समर्पण करन का रहस्य मानव के सपूर्ण अहभाव को छोडकर उस मूल विराट की शरण में विनीत भावना से अपने को समर्पित करना ही है। हमारे यहाँ केश समर्पण इसलिए एक प्रचलित प्रथा है।

लेकिन पारपरिक एव साप्रदायिक पद्धति में भगवान को केश समर्पण करने से ही मनौती पूरी होगी। यात्रियो की इस प्रमुख मनौती को पूर्ण करने केलिए देवस्थान ने अनेक कल्याण कट्टाओं का प्रबध किया है। यह विषय विशेष रूप से कहने की आवश्यकता नहीं है कि अनधिकारी नाइयों से अन्य जगह सिरमुण्डन कराने से पवित्रता नहीं रहेगी और भक्त की मनौती भी पूरी नहीं होगी। देवस्थान के नियमित नाइयों से सिर मुण्डन करवाने से ही वे केश भगवान को समर्पित किये जायगे।

इसलिए यात्रियो से निवेदन है कि वे केवल देवस्थान के कल्याण कट्टाओ में ही अपने केश समर्पण करे जहाँ पर अनेक अनुभवी नाई रहते हैं और जिस के नजदीक ही नहाने केलिए नियत शुल्क चुकाने पर गरम पानी देने की व्यवस्था भी है। जो यात्री केश समर्पण काटेज में ही करवाना चाहते हैं, वे देवस्थान के द्वारा इस का प्रबध कर सकते हैं।

केश समर्पण केलिए उचित दर पर कल्याणकट्टाएँ तथा काटेजो के पास टिकट बेचे जाते हैं। नाइयों को अलग रूप से पैसे देने की आवश्यकता नहीं है।

कुछ धोखेबाज व्यक्ति सिर मुण्डन का कम शुल्क लेकर, भगवान के दर्शन शीघ्र ही करवाने के वायदे करके यात्रियों को अनधिकारी नाइयो के पास ले जा रहे है।

यात्रियो से निवेदन है कि देवस्थान के कल्याणकट्टाओ को छोडकर अन्य जगह सिर मुण्डन न करवावें। ऐसा करवाने से वे केश भगवान को समर्पित नही समझे जायेंगे और यात्रियों की मनौतियाँ भी पूरी नही होंगी। बालाजी के शीघ्र दर्शन की सुविधा के लिए ति ति देवस्थान के द्वारा जो उत्तम प्रबध किये गये है, कोई भी व्यक्ति भगवान का दर्शन से शीघ्रतर करवाने में असमर्थ है।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,

ति. ति देवस्थान, तिरुपति.

मीराबाई बताती है कि—

"मण ते परस हरि रे चरण । टेक ।

सुभग सीतल कवल कोमल, जगत ज्वाला हरण, इण चरण प्रह्लाद परस्या इन्द्रपदवी धारण

इण चरण ध्रुवअटल करस्था सरण असरण असरण सरण ।

तुलसीदासजी का पादसेवन की महिमा के बारे में निम्नांकित अभिप्राय है—

"परनिंदा सुनि श्रवण मलिन में वचन दोष पर गाये ।
सब प्रकार मल भार लाग निज नाथ-चरन बिसराये ।
तुलसीदास व्रत दान ग्यान-तप सुविध हेतु श्रुति गावे ।
राम चरन अनुराग नीर बिनु मल अति नास न पायें ।।

अब तक पादसेवन से होनेवाले लाभो के बारे में हिन्दी के प्रमुख भक्तों के विचार व्यक्त किये गये है । कर्णाटक के हरिदासो से गायी गयी पादसेवन की महिमा का अब अध्यय करें । कनकदास से वर्णित पादसेवन की महिमा निम्न प्रकार है ।

हे मानव, केशवस्वामी के चरणारविन्दो को भजते हुए अपने जीवन का निर्वहण करो । ब्रह्मा शंकर ओर इन्द्र आदि से वे पूजे जाते है । उन्ही के स्पर्श से अहल्या का उद्धार हुआ । उन्हीं से पार्थ का रथ चला; धरती नापी गयी; उन्हींसे कलि अपने दरबार में गिराया गया। उन्हीं पादो ने कालिगनाम के फणियो पर नर्तन किया उनको गरुड और शेष धरकर फिरते है तथा लक्ष्मी अपनी गोदपर रखकर दबाती रहती है ।

वादिराजस्वामी हरिचरणो की महिमा निम्न प्रकार गाते है ।

"एथा पावन पादवो रगय्य, इन्नेंथा चलुव पादवो ।
एथा पावन पाद इंतु जगदि केलु, पंथदोलिह कुरुपतियनुरुलिसिद ।।
ओलिदु गायासुरन शिरवोलिट्टु, हलवुभक्तर पोरद नेलेसि ।
उडुपिलि एन्नहृदय कमलदलि तोलगदे इरु तिप्प सुलभहयवदन ।।"

(अर्थात् हे रग-भगवान, आप के पाद कितने पवित्र और सुन्दर है ? उनसे नीच कुरु-पति लुढकाया गया । गयासुर से प्रसन्न होकर उसके सिरपर अपने पादो को रखा और नहीं ठहरकर बहुत से भक्तो का उद्धार किया । वैसे ही वे उडुपी क्षेत्र में तथा मेरे हृदय कमल में हयवदन के चरण-कमल सुलभतया शाश्वत रूप से अंकित हो गये है ।

श्रीपादराय, गुरु गोपालदास, पुरदरदास आदि पादसेवन को महिमा के प्रशसक है। वेणुगोपाल दासजी की प्रार्थना सुनियें ।

"इदु एनगे गोविंद निन्न पादारविंदद्य हे मुकुद इंदिरारमण ।
सुन्दर वदनने नदगोपन कद मदरोद्धार आनद सिंधुशयन नोदेनय्य ।
भववधनदोलु सिलुकि मुदे दारिगानदे कुदिदे जगदोलु" ।।

हे गोविन्द, मुकुद, इदिरारमण, नदगोप का कुंवर, सुन्दरवदन, मन्दरेद्धार सिंधुशयन, मै इस जीवन रूपी भवबधन में फँसकर आगे का मार्ग न जानकर पीडा से दुखी हूँ । आप के पादारविन्दो के दर्शन का सौभाग्य प्रदान कीजिए ।

अपनी देवेरियों सहित विराजमान श्री भगवान बालाजी की उत्सव मूर्ति
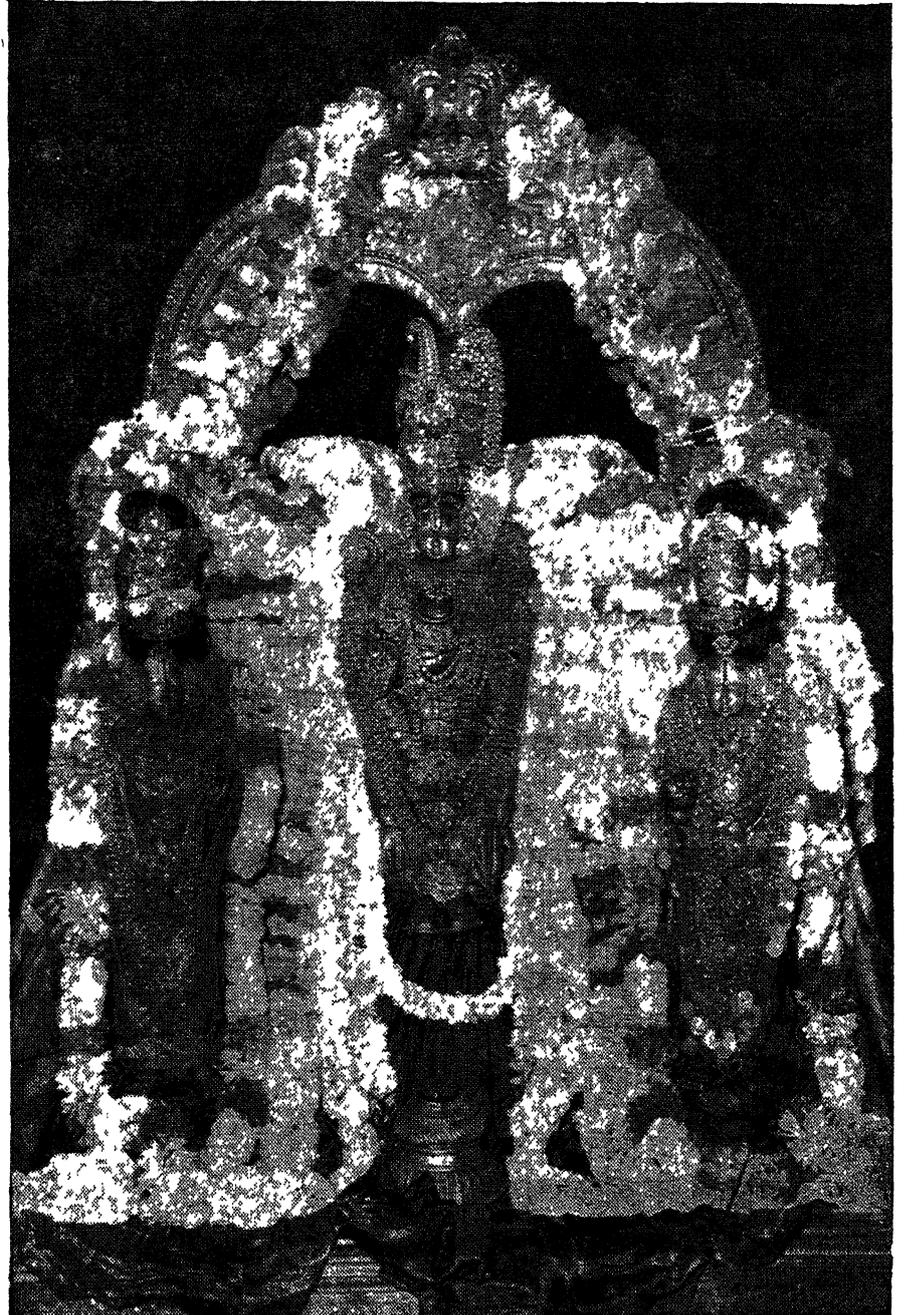
दास्य भक्ति

दास्यभक्ति के बारे में कबीरदास जी के अत्यधिक पद पाये जाते हैं। वे उपदेश देते थे कि भक्त भगवान को अपना मालिक समझकर उनकी सेवा में अपने आपको भूल जावें। उनकी ही वाणी में उनका उपदेश सुनें। यथा—

" सेवग जनसेवा के ताईं बहुत भाति करि सेवि गुसाई।
तैसी सेवा चाहा लाई जो सेवा बिन ,रह्या न जाई ।।
सेवा करता जो दुख भाई सो दुख बरि, गिनह सवाई।
सेवकरत सो सुख पावा नित्य सुख दुख दोउ बिसरावा ।।
सेवग सेब मलांनिया पन्थकुपन्थ न जान।
सेवग सो सेवा करे जिहि सेवा भल मान ।।

सूरदास वल्लभाचार्य से दीक्षा लेने के पहले दास्य भक्ति के प्रति उनकी आस्था थी। डा० एन एस. दक्षिणामूर्ति जी का विचार है कि वल्लभसंप्रदाय में प्रवेश करने के बाद भी उन्होंने दास्यभक्ति के पद बनाए थे तथा वल्लभसंप्रदाय में भी दास्य भक्ति केलिए स्थान है। सूरदास भगवान से अपनी तुच्छता प्रकट करते हुए अपने आप को भगवान का दास बताते हैं। सूरदास के निम्नांकित विनय के पदों से यह धारण ठीक उतरती है।

अ) " हमें नंदनंदन मोल लिये, जम के फंद कटि मुकराए अभयअजाव किये।
सब कोउ कहत गुलाम स्याम को सुनत सिरातहिये।
सूरदास को और बडो सुख जूठन खाई जिये। "

आ) पतित पावन दीन बंधु अनाथनिनाथ।
संतत सब लोकनि सुनि गावन यह साथ मोमों
कोउ पतित नहीं अनाथ-हीन दीन।
कोहे न निस्तारत प्रभु गुननि अंगनि होन
सूर सकल अंतर के तुम हीं हो साखी।

इ) नाथ सको तो मोहि उधारो पतितनि में

विख्यात पतित हो पावन नाम तुम्हारा।
...सूर पतित कौ और नहीं तो बहुत विरद-कत भारा।। "

तुलसीदासजी दास्य भक्ति के सबसे अधिक प्रचारक थे। उनकी दास्य भक्ति के दो तीन उदाहरण देखें।

" को रघुबीर सरिस संसारा सीलु सनेहु निवाह निहारा।
जेहि जेहि जोनि करमबस भ्रमड़ीं तहं तहं ईसु देइ यह हमाहीं।।
सेवक हम स्वामी सियनाहु होउ नाथ येहु ओर निबाहू।। "

कर्णाटक के हरिदास या वैष्णव-भक्त अपने आपको भगवान के प्रति अपनी सेवा करके उनके अनुग्रह की प्राप्ति केलिए दास्य भक्ति को प्रधानता देते थे। श्री पुरंदरदास की वाणी में दास्य भक्ति की महिमा यों है।

" व्यापार नगगापितु श्रीपति पादारविंद सेवेयेंबो
हरिकरुणवे अगि गुरुकरुण मुंडास हरिदासर
दयवेंबो वल्लि परम पापि कलियेंबो पापासु मोटृ
दुरात्मरादवर एदे मेले नडेवंथ ।।

(श्रीपति के पादारविन्दो की सेवारूपी हरि की करुणा ही हरिदासों के वस्त्र हैं। गुरु की करुणा पगड़ी है, भगवद्भक्तो की दया उत्तरीय है। इससे परमपापी कलिरूपी चप्पल पहनकर दुरात्माओ की छाती पर अधिकार करने का सौभाग्य हम भक्तो को प्राप्त हुआ है।)

श्रीवादिराजस्वामी की प्रार्थना है। ..
" सेवकनेलो नानु निन्नय पाद सेवे नीडेलो नीनु।
कावुदेन्नेलो श्रीवघूवर रावणांतक रक्षिसेन्ननु।

हमारा ऐश्वर्य है तू

हमारा ऐयप्य है तू।
हमारा ऐश्वर्य है तू।
तू क्यों रहता अकेले वन में ?
हम पकड़ रखने अपने मन में।
सब की माता होती कोई नारी।
मगर तेरी माता है चक्रधारी।
सब को मिल्ती यहाँ नारी।
पर क्यों बन गया ब्रह्मचारी ?
युवती न आसकती तेरे मन्दिर में।
पर देता शान्ति उसके जीवन में।
व्रत, नियम से मिल्ता तेजस।
हाँ! मन से भागता तेजस।
हम करते खुशी से तेरा नाम जप।
नाश होते तुझ से हमारे सभी पाप।
तुझपर रखते भक्ति हम लोग।
इसपर संदेह नहीं, हमें न कोई।

कहाँ आती ऊँच-नीच की भावना ?
अवश्य आती तुझसे मिलने की साधना।
समान होते यहाँ गरीब-अमीर।
बहती अधिक तेरी भक्ति समीर।
दुख के दुख देनेवाला तू।
हम को सुख देनेवाला तू।
तेरी पूजा होती हर जगह धूम-धाम।
हम सुखी होते हर दिनते रीकृपा से।
कौन होता हमारा मददगार तुझे छोडकर ?
क्या होता दयालु तुरन्त इसे बढ कर ?
दया करना हम पर, है धर्मशास्ता।
दिखाना हमें अभी सच्चा रास्ता।
देना मुझे कई बार नर-जन्म।
तेरी याद करके रहूँ आजन्म।

— श्री के. एस. शंकरनारायण,
कल्पाक्कम्.

सूर भक्ति के परिप्रेक्ष्य में प्रेम और अहं

(गताक से आगे)

"जनम जनम की दासी तुम्हारी
नागर नन्द किसोर"

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि—

"खैर, खून, खांसी, खुशी, बैर प्रीति मधुपान
रहिमन दाबे ना दबे जानत सकल जहान ॥"

ये बातें छिपायी नहीं जा सकती है। रीति-परम्पराओ का निर्माण व्यक्ति की मूल प्रवृत्तियो को नियंत्रित करने के लिए किया जाता है। व्यक्ति में जो भावना प्रबल हो जाती है वह इन सारी मर्यादाओ से टकराती हे सभी को क्षत विक्षत करती हुई स्वयं को अक्षुण्ण बनाने रखती है। गोपियो का प्रबल प्रेम वेगवती धाराओ के सदृश्य है उसे मर्यादा की चट्टाने रोक नहीं पाती है। प्रतिक्षण धारा का आवेग बढ़ता जाता है "नेह न होय पुरानो रे अलि"। प्रेम के इस रंग में चमत्कार हीं चमत्कार है। जितना इसे धोते है उतना ही रंग उज्वल होता है। जन्म जन्मान्तरो से प्रवाहित होती हुई यह अविरल धारा उज्वलतर होती चली जाती है। यह प्रेम अमर है। समाप्त नहीं हो सकता है। विरह की कसौटी पर जितना इसे परखो उतना ही खरा उतरेगा। पतंग, कुरग, पपीहा सभी इस अमर प्रेम को जीवन्त बनाये हुए हे। युगो से यह मान्यता चलती चली आयी है कि प्रेम, उत्सर्ग का आकाक्षी है। कबीर के अनुसार"—

प्रेम न बाड़ी ऊपजे, प्रेम न हाट बिकाय
राजा परजा जेहि रुचे, सीस देह ले जाय'

यह बलिदान और समर्पण प्रेमी को कभी सुख से नहीं रहने देता है। मीरा, प्रेम के रंग में रंगने के पश्चात् अनुभव करती है—

"जो मै ऐसी जानती प्रीत किये दु:ख होय
नगर ढिंढोरा पीटती प्रीति न करयो कोय"

गोपिया कहती हे—"प्रीति करि काहू सुख न लह्यो" इसलिए चेतावनी देती हे "गनु को प्रीति के फन परे।" इतना सब कष्ट उठाने के पश्चात् भी प्रेमी सम्पूर्ण दुखो को कुचलता हुआ साहस के साथ प्रेम पथ पर बढता जाता है।

सूर ने गोपियो के माध्यम से अपने प्रेम की पुष्टि करते हुए इस बात को स्वीकार किया है कि प्रेम में अनन्यता और उत्सर्ग का सर्वाधिक महत्व है। इनके समक्ष सम्पूर्ण वस्तुओं को हार स्वीकार करनी पड़ती है। सघर्षमय जीवन और वियोग के पल, प्रेमी के लिए आवश्यक है क्योकि प्रेम की परिपक्वता का आधार है यह।

सूरदास जी ने सर्वाधिक महत्व की बात यह बतायी है कि प्रेम की इस परिपक्वावस्था के मध्य अहम् नहीं आना चाहिए। अहंकार प्रेम की मर्यादा को खडित करता है। उत्सर्ग की भावना यदि अहम् के आवरण में लिपट कर रह जाये तो प्रेम की परिभाषा झूठी पड़ जायेगी। कबीर ने निम्न दोहे में प्रेम के मध्य आने वाले इस अह को तिरस्कृत करने का उपदेश दिया है—

"यह तो घर है प्रेम का खाला का घर नाहिं।
सीस उतारे भुई धरे, तब पैठे घर माहिं॥"

डा० इन्दुवशिष्ठ, हैदराबाद

अहकार का विनाश आवश्यक है अन्यथा प्रेम का रूप शुद्ध सात्विक नहीं रह पायेगा। ईश्वर की हृदय में प्रतिष्ठा करनी है तो अहम् की दीवार को तोड़ना होगा। अहम् रहते ईश्वर नहीं आता और जब भगवान का प्रवेश होता है तो अहम् का अस्तित्व नष्ट हो जाता है—

"जब मै था तब हरि नही, अब हरि हैं मै नाहिं।"

राधा सहित श्री कृष्ण का चित्र
फोटो : श्री एस.वी के एस. श्रीनिवासन, तिरुपति

सूर व तुलसी की रचनाओ में अहम् नहीं अपितु दैन्यता व समर्पण की भावना कूट कूट कर भरी हुई है। उसका रहस्य व सत्य मनोवैज्ञानिक आधार पर यही है कि सूर व तुलसी आरम्भ से ही दीन-हीन रहे चले आये हे इस कारण वह प्रभु को प्रेमपूर्ण हृदय के कुछ अन्य समर्पित नहीं कर सकते जबकि दूसरा पक्ष यह भी है कि हर प्रेमी स्वयं को प्रेम-पात्र के समक्ष हीन समझ कर प्रार्थना करता है। उसकी दृष्टि में प्रेम-पात्र इतना महान् हो जाता है कि सृष्टि की हर उपमा हर मूल्यवान वस्तु मिट्टी के मोल लगने लगती है। सूर ने पतित-पावन के समक्ष स्वयं को असहाय बताया है और अनुरागी दास के रूप में प्रस्तुत किया है।

सूर अहं व उसके त्याग के प्रति जागरूक थे। उन्हें जब कभी अपने में अहम् भाव प्रतीत होता है उसको वह त्याग देना चाहते है—

"मो सों कौन कुटिल खल कामी
जिन तनु दियो ताहि बिसरायौ ऐसो
नौन हरामी"

अहं भाव से तुम बिसराये. इतने हि
छूट्यो साथ।

सूर इतने अधिक दयनीय हो उठते है कि उन्हें यह कहते हुए किसी प्रकार का संकोच नहीं होता "वह असाधारण पापी है" सूर जैसे पापी का उद्धार करने वाला ईश्वर भी यश का पात्र बनेगा।

"अबलों नान्हें नान्हें तारे, ते सब वृथा
अकाज।
सांचे बिरद "सूर" के तारत लोकनि-
लोक अवाज।

उन्होने प्रत्येक विनय के पदो में स्वय को धिक्कारा है, तिरस्कृत किया है। अनेक प्रकार के नामो से सम्बोधित किया है।

इस प्रकार की दीनता जहाँ सूर के दयनीय और असहाय रूप का विश्लेषण करती है वहां प्रेम की अनन्यता का भी परिचय देती है। वह अनन्यता चातक पक्षी की है, पतगे की है और कुरंग की है, मीन की है। गोपियां अपने को चातक के वर्ग का बताती है। वे अपने प्रेम का विश्वास दिलाती कहती है—

"सब जल तजे प्रेम के नाते
चातक स्वाति बूंद नहिं छोड़त प्रगट
पुकारत ताते।

गोपियो के प्रेम की इस अनन्यता का विश्लेषण करते हुए सूर ने जहां अहम् का खंडन कर प्रेम को प्रतिष्ठित किया है वहा अन्य तीन तत्वो को भी बाधक रूप में उपस्थित किया है। लोकासक्ति, मानव-जीवन को ईश्वरीय प्रेम से विमुख करती है। आत्मा सत्य है किन्तु देह "कागज का पुतला है" क्षण भंगुर है। मृत्यु रूपी पानी की बूंद पड़ते ही नष्ट हो जाएगी। आसक्ति सम्पूर्ण दुर्गुणो को उत्पन्न करती है। आसक्ति से इच्छा, इच्छा से लोभ, लोभ से प्राप्ति की आकाक्षा, प्राप्ति की प्रेरणा सघर्ष, द्वेष ईर्ष्या आदि अनेक बुराइयो को जन्म देती है। इस के लिए आवश्यक है कि मनुष्य को संसार के प्रति वैराग्य भाव रखना चाहिए। यह वैराग्य तभी जागृत हो सकता है जब कि हृदय में ससार की मिथ्या सृष्टि का रहस्योद्-घाटन हो। यह अनावरित तब होगा जब ज्ञान जागृत होगा। ज्ञान को उत्पन्न करवाने वाली ईश्वरीय प्रेरणा व गुरू है। संसार मिथ्या है, नष्ट हो जाएगा। सूर ने मिथ्या ससार के यथार्थ का बोध करवाते हुए कहा है—

जा दिन मन पंछी उडि जैहैं।
ता दिन तेरे मन तरुवर के सबे पात
झरि जैहैं।
या देही को गर्ब न हरिये स्यार, काग,
गीध खैहै॥

यदि मानवीय धरातल पर कुछ सत्य है
तो वह है प्रेम।

यदि मानवीय धरातल पर कुछ सत्य है तो वह है प्रेम। प्रेम की राह चल कर मनुष्य अपने जीवन को अच्छी तरह साध सकता है। एक की ही साधना करने से सब कुछ सध जाता है। भक्त कवि सूरदास जी की ऐसी धारणा है।

भक्त के मार्ग में आने वाला बाधक तत्व जहां ससार के प्रति आसक्ति है वहां अनेकानेक देवताओ के आस्था भी है। मन एक साथ दस से प्रेम नहीं कर सकता है। आस्था या श्रद्धा हो सकती है किन्तु प्रेम एक के प्रति ही रहता है। सूर के कथनानुसार कि अनेक देवताओ को मान्यता दो किन्तु इष्ट के प्रति एकाग्र भाव आवश्यक है। अन्यत्र जाने से मन और आत्मा को तुष्टि नहीं मिल सकती है। गोपियां, कृष्ण की दीवानी है वह अपनी अनन्यता का बार बार उल्लेख करती हुई यही कहती है कि विधाता भले ही हमारा शरीर नष्ट कर दुबारा हमारी रचना करे किन्तु हमारे मन में तब भी कृष्ण के अतिरिक्त अन्य कोई भी प्रविष्ट नहीं कर सकता। गोपियों की आस्था अपने इष्ट के प्रति शिथिल नहीं होती है। कृष्ण के मथुरा-गमन के पश्चात् ऊधौ आ कर उपदेश देते है। योग धारण करने के लिए कहते है। किन्तु उद्धव जी की योगवाणी उन्हें ही बहुत महगी पड़ती है। वे गोपियो की आस्था को खिगा तो नहीं पाते अपितु वे स्वयं भी योग आदि भूल कर गोपियो के प्रेम मार्ग को अपना लेते है।

गोपियो के प्रेम में खीझ, झुंझलाहट, उपालभ प्रवंचना के प्रति आक्रोश है किन्तु कृष्ण के प्रति उनका गहरा विश्वास है। वे पूर्णरूपेण कृष्ण के प्रति समर्पित है। उनका अहभाव कहीं लक्षित नही होता। वे अहं कैसे पालेंगी वे तो स्वय लज्जित है सबके सम्मुख कि जिस कृष्ण के पीछे पागल हो कर हमने लोक मर्यादाओ का त्याग किया आज वही हमें त्याग कर चले गये। हमारे ही प्रिय ने हमारी उपेक्षा की। एक ओर जहां यह विचार आता है वहां दूसरी ओर उन्हें अपने प्रेम पर पूर्ण विश्वास है। वे सभी स्वय को कृष्ण की पत्नी मानती है। कृष्ण ने, व्रज के ग्वालो का अपहरण होने के पश्चात् उन सभी के रूपो में अपने आपको रूपान्तरित किया और तभी सब गोपियो से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित किया। इसी प्रकार वह अविवाहित युवतियां जो कृष्ण को पति रूप में प्राप्त करने के लिए लालायित थीं उनके साथ भी कृष्ण ने सामूहिक गन्धर्व विवाह रासलीला के समय किया। कृष्ण ने गोपियो को पत्नी रूप में ग्रहण करना और उनकी इच्छापूर्ति करना भी गोपियो की आस्था व अनन्य प्रेम के परिचायक है। कृष्ण ने गोपियो की इस अनन्यता को स्वीकार कर अपनी मर्यादा को जहां प्रतिष्ठित किया है वहा गोपियो को भी अमर कर दिया है। गोपिया पुनीत सिद्धात्मायें है।

सूर की भक्ति भावना में प्रेम सर्वोच्च है। वहां अहं के कारण अलगाव नहीं है बल्कि समर्पण के कारण प्रेम की अनन्यता की व्याख्या है। अह स्वार्थ को जन्म देता है, प्रेम निःस्वार्थ को आमंत्रित करता है। अह एकाधिकार चाहता है और प्रेम समष्टि में बिखर जाना चाहता है। अहं प्राचीरो का निर्माण करता है तो प्रेम उनको तोड़ने का कार्य करता है। अहं मिथ्या है, प्रेम शाश्वत है। सूर की प्रेम परम्परा में यही ध्वनि बार बार सुन पड़ती है। यही अविरल धारा कल कल कर बहती है। यही प्रेम चिरन्तन सत्य को प्रतिष्ठित करता आभासित होता है।

आचार्य वल्लभ के पुष्टि मार्ग में दीक्षा पद्धति

डा० एन० सी० सीता अम्माल
हिन्दि विभाग, प्राच्य महाविद्यालय,
तिरुपति

सभी भक्ति सम्प्रदायो की अपनी दीक्षा पद्धति होती है। दीक्षा एक ओर साधक को साधन मार्ग में लगाती है तो दूसरी ओर वह भजन पद्धति अथवा आध्यात्म-साधना को 'संप्रदाय' का रूप दे देती है— "सम्यक रूपेण प्रदीयते यस्मिन् स एव संप्रदायः" आचार्य के द्वारा जहाँ भलीभांति आध्यात्म का साधन अथवा मार्ग साधक को या सेवक को सौंपा जाता है उसे संप्रदाय कहा जाता है।

भगवान के सगुण साकार रूप को माना जाय अथवा निर्गुण निराकार रूप को भक्ति उपासना केलिए दीक्षा आवश्यक है। संन्यास-धर्म में जहा 'तत्वमसि' सिखाया जाता है वहाँ भी साधन चतुष्टय संपन्न प्रमाता को अधिकारी जान कर ही वेदान्त-पथ की दीक्षा दी जाती है।

सोलहवीं शताब्दी के वैष्णव धर्म आन्दोलन के प्रधान प्रवर्तक श्रीमद् वल्लभाचार्य एक अपूर्व क्षमताशाली एवं प्रतिभा सपन्न विद्वान थे। ये एक उच्च कोटि के तत्व चिन्तक, साधार-ब्रह्म की उपासना के अनुपम उपदेष्टा भगवदनुग्रह (पुष्टि लीला) के भाव प्रधान प्रेम लक्षणा भक्ति के ही अनन्य पोषक थे एवं भारत के प्रथम श्रेणी के दार्शनिक विचारक थे। आचार्य ने भक्ति सिद्धान्त के शास्त्रीय रूप को ही नहीं, अपितु उस के व्यवहार्य रूप को भी प्रभावित किया है। ये साकार ब्रह्मवाद के संस्थापक थे।

वल्लभाचार्य जी के पूर्वज-आन्ध्र प्रदेश के 'कांकरवाड' नामक ग्राम के निवासी थे। वे भारद्वाज गोत्र के तैलग ब्राह्मण थे। उन का वंश 'वेलनाट' कहलाता था। वे काशी में जा बसे थे। आचार्य का जन्म मध्यप्रदेश के चंपाण्य नामक स्थान में हुआ था। काशी मे शिक्षा प्राप्त कर वे विजय नगर दक्षिण में मामा के यहाँ चले आये थे। वहाँ मायावादियो (शांकर मातानुयायियो) को शास्त्रार्थ में पराजित कर आचार्य पदवी पाई थी। भारत पर्यटन करते हुए उन्हें प्रेरणा हुई कि गिरिराज पर स्थित देवदमन अथवा इन्द्र दमन श्रीनाथ जी का सपूर्ण प्राकट्य हुआ है। उन्हीं को गोवर्धन-नाथ जी भी कहा जाता है। वे ब्रज में स्थित गिरिराज पर गए और मदिर बनवाकर उन की सेवा का प्रबन्ध किया।

आचार्य ने अपने सिद्धान्त 'शुद्धाद्वैत' का प्रचार किया। यह विष्णुस्वामी द्वारा प्रवर्तित ब्रह्म वाद था जिस का अर्थ है—शुद्ध = माया संबधरहितम् ब्रह्म। अर्थात ब्रह्म माया शबलित नहीं है वह सदा सर्वदा शुद्ध निर्लिप्त है। जीव ही अविधा लिप्त है। इस शुद्धा द्वैत ब्रह्म वाद की साधना करने केलिए उन्होने 'पुष्टि मार्ग' की स्थापना की। पुष्टि शब्द आचार्य ने भागवत द्वितीय स्कंध के दसवे अध्याय के प्रथम श्लोक

"अत्र सर्गो विसर्गश्च स्थान पोषण भूतयः" से लेकर अनुग्रह मार्ग या पुष्टि मार्ग की स्थापना की। पोषण या पुष्टि का अर्थ होता है अनुग्रह। भागवत में आया है—

"स्थिति वैकुण्ठ विजयः पोषणं तदनुग्रह"

अर्थात् भागवतोक्त भगवान की दश विध लीलाओं में 'पोषण' या अनुग्रह चौथी लीला है। यदि भगवान दया करके जीव पर अनुग्रह करे तभी वह उन को पा सकता है या उन की ओर उन्मुख हो सकता है। तात्पर्य यह है कि आचार्य के मतानुसार भगवद् भक्ति या भागवत् प्राप्ति साधन साध्य नहीं कृपा या अनुग्रह साध्य है। उस अनुग्रह के लिए जीव क्या प्रयत्न कर सकता है? बस प्रतीक्षा ही कर सकता है। फिर भी इस अनुग्रह मार्ग की अपनी भक्ति पद्धति है और यह है भगवान को सर्वतो भावेन अपने को सौंप कर उन की साकारोपसना करते हुए अर्चा विग्रह की सेवा में निरत अथवा दत्तचित हो जाना। इस केलिए श्रीमद् भागवत तत्वज्ञ वैष्णव अथवा आचार्य वंशजो से दीक्षा लेना होती है।

पुष्टिमार्ग की दीक्षा पद्धति—पुष्टिमार्ग में दो प्रकार की दीक्षा पद्धति है। पहले नाम श्रवण अष्टाक्षर मंत्र द्वारा, फिर आत्मनिवेदन। जीव सहज जन्म के साथ ही अविधा ग्रस्त है। अतः उसे माता-पिता द्वारा अथवा वैष्णव आचार्य द्वारा शैशव में ही —"श्रीकृष्णः शरमं मम" यह अष्टाक्षर मत्र सुना दिया जाता है। जिस प्रकार विशिष्टाद्वैत अथवा श्री संप्रदाय में वैष्णव भक्तों को गुरु के द्वारा पच संस्कारों से 'नारायण' मंत्र की दीक्षा दी जाती है। पंच सस्कार इस प्रकार है—

"तापः पुंड्र स्तथा नाम मंत्रो यागश्च पंचमः"

अग्निमे तत्व विष्णु के शंख-चक्र चिह्न स्वर्ण मुद्राओ को मंत्रोच्चारण से दोनों भुजाओ पर छापा लगवाना

२. मस्तक पर ऊर्ध्वपुंड्र से तिलक धारण करना

३. अपने को स्वामी रामानुजाचार्य का नित्य किंकर स्वीकार करना

४. अष्टाक्षार मंत्र "नमो नारायणाय" का उपदेश ग्रहण करना

५ भगवान की सेवा देवतार्चन विधि को नियमित रूप से करने के नियम का पालन करना।

(शेष पृष्ठ २५ पर)

तिरुमल-तिरुपति देवस्थान, तिरुपति

कोइल आलवार तिरुमंजनम्

आगम शास्त्रों ने देवस्थलो मे पवित्रता की आवश्यकता तथा वैशिष्ट्य का विशेष उल्लेख किया है। मंदिर के अन्दर प्रवेश करने के पहले स्नान करना, पादरक्षाओ को छोडना इत्यादि कुछ नियम इसी पवित्रता को बनाये रखने केलिए ही निर्णीत किये गये हैं। मंदिर के अहाते में ही नहीं बल्कि गर्भगृह में भी आगम शास्त्र के अनुसार एक पवित्र तथा आरोग्यदायक कार्यक्रम संपन्न होता है जो कोइल आल्वार तिरुमजनम् के नाम से अभिहित है।

इस सेवा विधान मे सभी मूर्तियाँ तथा अन्य वस्तुएँ दीपों सहित गर्भगृह से बाहर लायी जाती हैं। और मूलमूर्ति को पानी अदर नहीं आनेवाले आच्छादन (water proof covering) मे अच्छादित किया जाता है। उस के बाद पूरा गर्भ-गृह, दीवार, ज़मीन तथा ऊपरी भाग अधिक गरम पानी से खूब साफ किया जाता है। तदनतर सर्वत्र कुकुम, कर्पूर, चदन, हल्दी इत्यादि से लेप किया जाता है। फिर मूलमूर्ति से अच्छादन हटाकर मूर्तियाँ, दीप और अन्य चीजो को गर्भ-गृह के अन्दर रखाया जाता है। मूलमूर्ति को पवित्र पूजाएँ समर्पित की जाती है और भोग लगाया जाता है।

यह पवित्र कार्यक्रम वर्ष में केवल चार बार मनाया जाता है- (१) युगादि के पूर्व (तेलुगु नूतन वर्ष), (२) मिथुन कटक सक्रमण के दिन (आणिवारि आस्थानम्) के पूर्व, (३) दिवाली के पूर्व (४) वार्षिक ब्रह्मोत्सव के पूर्व।

इस सेवा को मनाने केलिए सेवा की दर रु १,७४५/- है। १० लोगो को प्रवेश मिलेगा। कार्यक्रम के अत मे गृहस्थ को बडा, पापड, दोसै इत्यादि प्रसाद भी प्राप्त होगे। यह सेवा दैनिक पूजा कार्यक्रम के बाद प्रात ८ बजे सपन्न होती है। उस दिन भगवान का दर्शन दोपहर ३ बजे से चालू होगा।

TIRUMALA TIRUPATI DEVASTHANAMS

कार्यनिर्वहणाधिकारी,

ति ति देवस्थान, तिरुपति

साक्षात्कार का परिणाम - कबीर

साक्षात्कार का परिणाम:—

ईश्वर-दर्शन से साधक के सिरपर एक प्रकार का बावलापन सवार हो जाता है। उस का वर्णन कबीर ने इस प्रकार किया है:

"दरस दिवाना बावला, अलमस्त फकीरा।
एक अकेला हे रहा, अस्मत का धीरा॥
हिरदे में महबूब है, हरदम का प्याला।
पियत पियाला प्रेम का, सुधरे सब ही साथी॥
आठ पहर झूमत रहै, जस मैगल हाथी।
बंधन काट मोह का, बैठा निरसंका।
बाके नजर न आवत, क्या राजा क्या रंका॥
धरती तो आसन किया, तबू आसमान।
चोला पहिरा एक का, रहा पाक समाना॥
कह कबीर निज घर चलौ, जहँ कालन
घाही॥"

अर्थात्

ईश्वर के दर्शन से मै मस्त होकर दीवाना हो रहा हूँ। मै एकनत वासी बनगया हूँ। मेरे हृदय में ईश्वर है। भगवान की अर्पण की हुई प्रत्येक श्वास में मुझे आनन्द की मदिरा का प्याला पीने को मिलता है। प्रेम का प्याला मै पीता हूँ और मेरे सगी-सांघी सुधर कर इस आनंद का उपभोग करते हे। मै मदोन्मत्त हाथी की तरह आठो पहर झूमता रहता हूँ। मोह का बंधन काट कर नि:शंक हो कर रहता हूँ। मेरी दृष्टि में राजा रक का कोई भेद नहीं। पृथ्वी का आसन और आकाश का तंबू बनाकर राख का चोला पहन कर बैठता हूं तथा अत्यन्त पवित्र होकर भगवद्रूप हो जाता हूं।

कबीर दास उपदेश देते हे: मेरे बताए हुए मार्ग का अवलंब करो तथा जहाँ काल का प्रवेश नहीं होता ऐसे निज घर परम धाम को चलो।

तुकाराम ने भी यह भाव व्यक्त किया है

अपने तरने में कोई विशेष महत्त्व नहीं साक्षात्कारी पुरुष तो सब कुल को तारता है

"आपण तरेल नहे ते नवल।
कुलें उद्धरील सर्वांची तो॥"

भक्ति-रस में मस्त होकर कबीर संसार से पूरी तरह स्वतत्र और निस्पृह हो गए। इसका प्रभाव शाली वर्णन उनके मुख से सुनिए

(1) "हमन हैं इश्क मस्ताना, हमन को
होशियारी क्या।
रहै आज़ाद या जग में, हमन दुनिया से
यारी क्या॥
जो विधुरे हैं पियारे से, भटकते दर व दर
फिरते।
हमारा यार है हम में, हमन को इंतजारी
क्या॥
खलक सब नाम अपने को, बहुत कर सर
पटकता हैं।

श्री जगमोहन चतुर्वेदी, हैदराबाद.

हमन हरि नाम दाँचा है, हमन दुनिया से
यारी क्या॥
न मल बिछुडे पिया हम से, न पद बिछुडे
पियारे से।
उन्ही से नेह लागा है, हमन को वे करारी
क्या॥
कबीरा इश्क का माता, दूर को दूर कार
दिल से।
जो चलना राह नाजुक है, हमन सर बोझ
भारी क्या॥"

अर्थात्

मै प्रेम में मस्त हो गया हूँ। अब मुझे जाग्रत अवस्था में आने की आवश्यकता नहीं। संसार में मै बिलकुल स्वतत्रता, निस्पृहता पूर्वक रहता हूं। ससार की मैत्री से मुझे क्या काम? जो अपने प्रियतम स्वामी से बिछुड गए हे, वे अपने स्वामी की तलाश में दर-दर भटकते फिरते हे। मेरा सखा व स्वामी मेरे हृदय में है। अत मुझे उस से मिलने की प्रतीक्षा की आवश्यकता नहीं। सब जग अपनी कीर्ति के लिए हाथ मारते सर पटकते हे। मै तो हरि नाम में रग गया हूँ, मुझे जग की मैत्री से क्या लाभ? प्राणो से भी अधिक प्रिय भगवान क्षण भर के लिए भी मुझ से दूर नहीं होते और न मै उनसे क्षण भर के लिए विलग होता हूँ। मै तो उनसे अनन्य प्रेम रखता हूँ। अब मुझे चिन्ता का क्या कारण? हृदय से द्वैत भाव दूर कर मै ईश्वर प्रेम में मतवाला हो रहा हूँ। यह प्रेम का मार्ग अति कोमल है, फिर सिर पर द्वैत का भार क्यों लादा जाए?

(ii) सदा आनंद दु:ख दुंद व्यापै नहीं,
पूरनानंद भर पूर देखा।
भर्म और भ्रांति तहाँ नेक आपौ नहीं,
कहै कबीर रस एक देखा॥

कबीर कहते हैं:

परम ज्योति के दर्शन के बाद साक्षात्कारी पुरुष परमानंद में मग्न हो जाता है उसे दु ख द्वन्द व्यापते नहीं। वहाँ भ्रम और भ्रान्ति प्रवेश नहीं कर सकते।

जीवन मुक्ति के परमोच्च पद पर पहुँचने पर सत्पुरुष परमेश्वर की आज्ञा से जगद्धार केलिए साधारण मनुष्यो को परमार्थ का ज्ञान बताने का कार्य करते हे। कबीर ने भी ऐसा ही किया, परन्तु उन्हे इस बात का खेद है। वे कहते हे "मै ईश्वर की आज्ञा मानकर मनुष्यो को सच्चे कल्याण का मार्ग दर्शाता हूँ, परन्तु मेरे उपदेश को कोइ नहीं मानता।" यथा

"कहु रे जो कहिने की होय॥ टे०॥
ना कोइ जानै ना कोइ मानै ताते अचरज
मोइ॥
अपने अपने रंग के राजा मानत नाहीं कोइ।
अति अभिमान लोभ के घाले, चले अपनपौ
खोइ॥
मै मेरी करि यह तन खोयो, समुझत नहीं
गँवार।
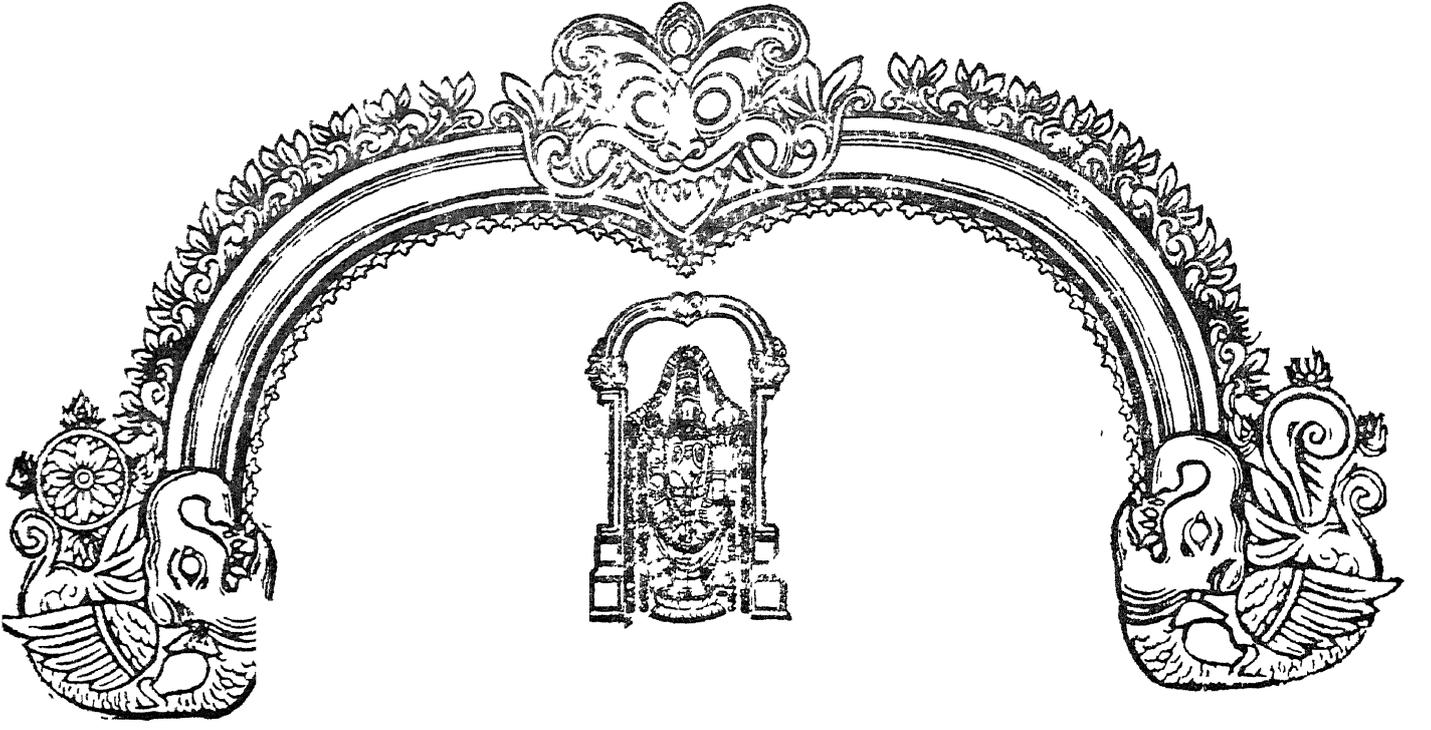
तिरुमल तथा तिरुपति यात्रा की यातायात - सुविधाएँ

भारत के किसी भी रेल्वे स्टेशन से तिरुमल तक रेल के सीधे टिकेट खरीदे जा सकते हैं। तिरुपति तक सीधी रेलगाडियों का प्रबंध भी है। जैसे कि मद्रास से (सप्तगिरि एक्सप्रेस, बडी लाइन), विजयवाडा से (तिरुमल एक्सप्रेस, बडी लाइन), काकिनाड़ा से (पेसंजर गाडी बडी लाइन), हैदराबाद से (वेंकटाद्रि एक्सप्रेस, छोटी लाइन और रायलसीमा एक्सप्रेस, बडी लाइन), तिरुचिनापल्लि से (फास्ट प्रेसंजर गाडी, छोटी लाइन) पाकाला, काट्पाडि, रेणिगुण्टा तथा गूडूर जैसे रेल्वे जंक्शनों से तिरुपति तक सुविधाजनक मिली जुली रेलों का प्रबंध है। भारत के किसी भी रेल्वे स्टेशन तक जाने केलिए तिरुमल से ही वापसी यात्रा का टिकेट भी खरीद सकते हैं।

मद्रास तथा हैदराबाद से तिरुपति तक नियमित विमान सेवा का प्रबंध है और हवाई अड्डे से उन यात्रियों को तिरुमल तक ले जाकर फिर वापस लाने केलिए एक विशेष बस का प्रबंध भी है। सुदूर प्रदेशों से रेल या बस से आनेवाले यात्रियों को तिरुमल पहुँचाने केलिए लिंक बसों का भी प्रबंध है। प्रातः काल से लेकर रात देर तक तिरुपति - तिरुमल के बीच हर ३ मिनट पर लगातार चलनेवाली बसों का प्रबध है। ए. पी. एस. आर. टी. सी. शाखा द्वारा तिरुपति - तिरुमल के बीच कान्ट्राक्ट कौरेज बसों का प्रबध भी है। इस में एक ट्रिप केलिए रु. १३५ देकर ४५ यात्री जा सकते हैं। तिरुपति से तिरुमल तक पैदल दो रास्ते भी हैं जो भव्य सुंदर सात पहाडियों से होते हुए हैं। अनेक यात्रीगण अपनी मनौती के रूप में पैदल रास्ते से आनंद उठाते जाते हैं।

तिरुपति से तिरुमल तक दो घाटी रोड हैं जिन में से एक तिरुमल जाने केलिए द्वितीय तिरुमल से लौटने केलिए हैं।

व्यक्तिगत कारों के लिए भी तिरुमल पर जाने की अनुमति है। यहाँ पर टेक्सियाँ भी मिलती हैं।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

भौजल अध पर थाकि रहे हैं, बूडे बहुत
अपार ॥
मोहि आज्ञा दई दया करि काहू को
समुझाइ ।
कह कबीर मैं कहि कहि हारयो, अन मोहि
देख न लाइ ॥"

अर्थात्

जो कहने के योग्य है वह तुम्हारे हित की बात में तुम से कहता हूँ परन्तु मुझे आश्चर्य होता है कि न कोई इसे समझता है और न कोई इधर ध्यान देता है। प्रत्येक मनुष्य अपने रंग में मस्त है और राजा की भाँति अपनी उमंगो के अनुकूल आचरण करता है। सदुपदेश को कोई नहीं सुनता। अति अभिमान और लोभ के कारण लोग अपने जीवन का नाश कर रहे हैं। अहंकार के मद में चूर यह अज्ञानी कुछ नहीं समझते। भव सागर के अध पर ही थक कर असंख्य लोग डूब कर मर जाते है।

इन पर दया कर भगवान ने मुझे आज्ञा दी कि कुछ लोगो को तो हित का सच्चा मार्ग समझाओ। ईश्वर की आज्ञानुसार उपदेश कर मैं हार गया, थक गया पर मेरे उपदेश पर किसी ने ध्यान नहीं दिया तथा मैं बार-बार प्रयत्न करने पर भी जगदुद्धार का कार्य करने में असमर्थ रहा। अब मुझे कोई दोषी न ठहराना।

कृतार्थता:—

अन्त में उल्हास, कृतज्ञता और आत्म विश्वास पूर्वक कबीर कहते हैं:

मुझे ब्रह्म से ऐक्य प्राप्त हुआ, जीवात्मा ब्रह्म में समा गया, भव चक्र का अन्त हुआ, मैं ने जन्म-मरण के चक्र से छुटकारा पाया

श्रीमद् भगवद्‌गीता में भगवान कृष्ण कहते है:

"अनन्य चेता: सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभ:पार्थ नित्य युक्तस्य योगिनः ॥
मामुपेत्य पुनर्जन्म दु:खालयमशाश्वतम् ।
नाप्नुवन्ति महात्मानः ससिद्धिं परमां ॥"
(अ० ८ श्लो० १४-१५)

इसी तथ्य को कबीर ने इस प्रकार वर्णन किया है

"नोन गला पानी मिला, बहुरि न भरि है
गौन ।
सूरत शब्द मेला भया, काल रहा गहि
मौन ॥"

जिस प्रकार पानी में घुला हुआ नमक थैले में भरा नहीं जा सकता, उसी प्रकार जब चित्त-चैतन्य, जीव-शिव-इनका ऐक्य हो जाता है, ज्योति में ज्योति मिल जाती है तो मृत्यु उसका मुँह ताकती रह जाती है। वह जन्म-मरण के चक्र से छूट जाता है।

तुकाराम का इसी भाव का एक अभंग है:

"लवण जैसे पुन्हा जलाचे बाहेरी ।
येत नाही खरें त्यां तूनिया ॥
त्या सारिखे तुम्ही जाणा साधु-वृत्ति ।
पुन्हा न मिलती माया-जाल ॥"

जिस प्रकार पानी में घुला हुआ नमक पानी के बाहर नहीं आता उसी प्रकार भगवान में मग्न साधु-वृत्ति पुनः माया जाल में नहीं फँसती।

एक पद में कबीर ने कृतार्थता के उद्‌गार इस प्रकार निकाले हैं

"मन मस्त हुआ तब क्यों बोलै ॥ रे० ॥
हीरा पाय गाँठ गठियायो, बार-बार बाके
क्यों खोलै ।
हलकी थी जब चढी तराजू, पूरीमइ तब
क्यों तोलै ॥
सुरत कलरी भइ मतवारी, मदवा पी गइ बिन
तोलै ।
हंसा पाये मान सरोवर, ताल तलैया क्यों
डोलै ॥
तेरा साहिब है घट भीतर, बाहर नैना क्यों
खोलै ।
कहै कबीर सुनो भाइ साधो, साहिब मिल
गए तिल ओले ॥"

अर्थात्

ईश्वर प्रेम में मेरा मन मस्त हो गया। अब खोलने की आवश्यकता नहीं रही। मैं ने भगवद्‌रूपी हीरा को हृदय में बाँध रखा है। अब उसे खोल कर बाहर निकाल कर बार-बार देखने की क्या आवश्यकता है? उसका प्रकाश तो निरन्तर मुझे मिल रहा है। जब तराजू चढी हुई थी हलकी थी। अब पूरी भर गई है अब तोलने की क्या आवश्यकता है? सुरत (ध्यान) रूपी कलालिन ने अमिय रस रूपी मदिरा का अमूप पान किया है। इस आत्मानन्द में इतना मस्त हूँ कि अब इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं। मानसरोवर पर पहुँचने के बाद हंस ताल-तलैयों की तलाश में नहीं घमता फिरता। मैं अपने अभीष्ट स्थान को पहुँच गया हूँ। भगवान हृदय-कमल में विराज मान है। उनके दर्शन के लिए बाहर आँखें खोल कर संसार में घूम कर ढूँढने की क्या जरूरत है? कण-कण में छिपे हुए प्रभु का मुझे साक्षात्कार हुआ है। ★

अन्नमाचार्य
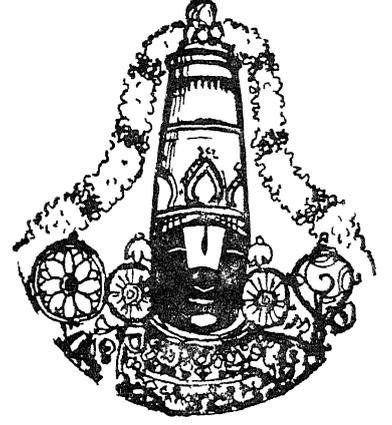
ईसवी १५–१६ वीं सदियों में हमारे देश का साहित्यिक वातावरण इस छोर से उस छोर तक विभिन्न सम्प्रदायों के सगुण भक्त गायकों के सुमधुर गीतों की लहरियों से भर गया। उसी समय बृंदावन में अष्टछाप कवियों के भक्ति-भरे गीतों की गूज उठ रही थी तो तिरुमल-तिरुपति के बालाजी श्री वेंकटेश्वर मंदिर में ताल्लपाक वंशी कवियों के संकीर्तन-गान प्रतिध्वनित हो रहा था। अष्टछाप कवियों में अग्रणी सूरदास (१४७८-१५०३ ई) थे तो ताल्लपाक वंशी कवियों के आदिपुरुष अन्नमाचार्य (१४२४-१५२३ ई) थे। दो शताब्दियों के इस सुदीर्घ काल में ये दोनों वैष्णव भक्त-कवि अपनी साधना के द्वारा स्वयं ही तर गये ऐसी बात नहीं, तत्कालीन परिस्थितियों में जकडे हुए असहाय हिन्दू लोगों के सामने तारने का एक सुविशाल मार्ग भी प्रस्तुत कर गये। सगुण भक्ति और अवतार लीलाओं का वर्णन करके उन्होंने भारतीय सस्कृति की गम्य पर रक्षा ही नहीं की, बल्कि अपने हजारों पदों के द्वारा साहित्य का भंडार भी भरा पुरा किया।

अन्नमाचार्य आंध्रप्रांत के कडपा जिले के ताल्लपाका नामक गांव में पैदा हुआ। बचपन से वे भक्त और गायक थे। सोल्ह साल की उम्र में वे तिरुमल-तिरुपति की यात्रा गये और वहां श्री वेंकटेश्वर जी के मंदिर में विशिष्टाद्वैत मत में दीक्षित होकर स्वामी की सेवा में अपने को समर्पित कर चुके। बाद में विवाहित होकर वे अहोबल मठ में जाकर वहां के वन् शठगोपयति के श्रीचरणों में शिष्य रहे और निष्ठा से द्राविड वेद तथा विशिष्टाद्वैत दर्शन का अध्ययन किया। तदादि जिंदगी भर वे धर्म एवं भक्ति के प्रचार में लगे रहे। एक ओर से आचार्य भी ठहरे और दूसरी ओर से मंदिर में कीर्तनिया भी रहे। वे रोज कमसे कम एक पद के मद्दे श्री वेंकटेश्वर के यशोगान मे राग-ताल-युक्त पदों की रचना करके उन्ही कीर्तन पुष्पों से भगवान की अर्चा करते थे। उनके पुत्र-पौत्रो ने भी यही क्रम जारी किया। फिर उन सबके पद ताम्र-पत्रों पर लिखाकर मंदिर में तदर्थ निर्मित संकीर्तन भंडार नाम कोठरी में सुरक्षित रखे गये। आज ऐसे २६३५ ताम्र-पत्र तिरुमल-तिरुपति देवस्थान के अधीन हैं, जिनका प्रकाशन भी क्रमशः हो रहा है। उन ताम्र-पत्रों में सिर्फ अन्नमाचार्य के पदोंवाले पत्रही २४४५ हैं, जिन पर करीब १५,००० पद लिखे मिलते हैं। यद्यपि कहा जाता है कि उन्होंने तेलुगु और संस्कृत भाषाओं में भगवद्‌यशोवर्णन में ३२००० पद रचे थे।

जन्म से स्मार्त होकर भी सूरदास और अन्नमाचार्य दोनों अपनी अभिरुचि के अनुसार वैष्णव बन गये। सूर वल्लभ संप्रदाय में दीक्षित थे तो अन्नमाचार्य रामानुज संप्रदाय में दीक्षित थे। सूरदास गोवर्धन के श्रीनाथ मंदिर में अर्चामूर्ति के सामने कीर्तनिया रहकर जीवन भर कृष्ण-लीला पदों का गायन करते रहे, तो अन्नमाचार्य तिरुपति के श्रीवेंकटेश्वर मंदिर में अर्चामूर्ति भगवान विष्णु के सन्निधान में लीला गान करते चले।

सूर की कविता विनय और लीला पदों के रूप में मिलती हैं। अन्नमाचार्य की रचना अध्यात्म और शृंगार पदों के रूप में मिलती हैं। सूर की रचना में भागवत पुराण का कथा-सूत्र आभास रूप में दृग्गोचर होता हैं,

डा० एम्. सगमेश्व...
तिरु...

ोर सूरदास

ए.,पी-एच.डी.

किंतु अन्नमाचार्य की रचना का वैसा कोई आधार नहीं है, वह सब उनकी कल्पना-प्रसूत है। विष्णु की सभी अवतारलीलाओं तथा श्रीवेंकटेश्वर भगवान और उनकी देवी अलवेलुमगा (लक्ष्मी, पद्मावती) की नित्य शृंगार लीलाओं के ऊहाजनित आधार पर ही अन्नमाचार्य की सारी कविता वितान निर्मित हुआ है। सूर और अन्नमाचार्य दोनों मुक्तक गेय कवि थे, दोनों गायक थे, और दोनों लीला-रचना व लीलागान के द्वारा भक्ति के साधक थे। अत. इन दोनों में बहुत सी बातों में साम्य मिलता है। वैषम्य कही मिलता है तो वह उन दोनों के व्यक्तित्व के कारण से ही। अन्नमाचार्य गृहस्थ थे। स्थानिक राजाओं से सख्यता और उनके यहां वे आचार्यत्व भी निभाने हुए थे। इस कारण से उनको कभी सम्मान मिला तो कभी घोर अनादर। आचार्य होकर अन्यमतावलंबी, खासकर अद्वैतवादी आचार्यों से वे शास्त्रार्थ भी करते थे और उनको मुंह-तोड़ जवाब देते थे। वे स्वभाव से सूर की तरह नितांत सात्विक नही थे। वे कभी कभी उद्विग्न होकर प्रतिस्पर्धियों से लड पडते थे। उनके अध्यात्म कीर्तनों में ऐसे कई वैयक्तिक जीवन से संबन्ध विषयो के अलावा तत्कालीन विषय परिस्थितियों का जीता-जागता चित्रण भी मिलता है। लेकिन उन सभी अवांकित लौकिक बाधाओं का अंत करने तथा लोक-कल्याण में शीघ्रता दिखाने के लिए ये भक्त-कवि अपने आराध्य भगवान श्रीवेंकटेश्वर से अनुनय विनय व प्रार्थना करना कभी नहीं भूलते।

सगुण वैष्णव भक्तों के विनय पदों की भूमिका साधारणत: एक ही तरह की होती है। अत: सुदूर देशों में रहकर, विभिन्न कालों में होकर और अलग अलग भाषाओं को बोलते हुए भी वे कवि अक्सर एक ही तरह के भाव व्यक्त करते हैं। फिर, सूर और अन्नमाचार्य उम्र में थोडा अंतर हमे होने पर भी समकालीन थे। सूर के दीक्षा-गुरु वल्लभाचार्य जी सारे भारत की तीन बार परिक्रमा कर आये ही नहीं, तेलुगु देश व तेलुगु भाषा में उनका आनुवंशिक सबंध भी था। आचार्य प्रभु ने पुष्टिमार्ग की भक्ति-साधना में जिस शरणागति तत्व को प्रथम स्थान दिया है, वही तत्व रामानुज मतानुयायी विशिष्टाद्वैत साधकों का भी प्रधान रूप से विहित व वरेण्य तत्व है। अत: सूरदास और अन्नमाचार्य दोनों में उनके विनय और अध्यात्म पदों में यही शरणागति तत्व पग पग पर व्यजित होता मिलता है। दोनों मनसा, और कर्मणा अपने को भगवान के दिव्य चरणों में समर्पण करके अपने जीवन को चरितार्थ माने हैं। तभी सूर कहते हैं कि "साधन, मंत्र, जंत्र, उपम, बल ये सब डारो घोड। सूरदास स्वामी करुणामय स्याम चरन मन पोह। अन्नमाचार्य भी इसी मत का अनुवाद करते कहते हैं कि "हरि की शरण में जाना ही तप, जप और धर्म है। हे भगवन्, मै और कोई पुण्य नहीं चाहता, तुम्हारे ये चरण बस हैं।"

अन्नमाचार्य के मत में जीव का कर्तव्य भगवान की शरण में जाना हैं, नकि संसार का अनुसरण करना। वे कहते है:

"इष्टदेव, घरके आंगन में कल्पतरु, श्रीवेंकटेश्वर को छोडकर औरों के पीछे दौड़ना नाव को छोडकर पानी में डूबते मदद की

पुकार मचाना जैसा है। (२–१०४)। मानव जन्म का फल भगवान वेंकटेश्वर का दास बनने में ही है (२-२१२)। जीर्णरोग जैसे ससार का एकमात्र राजोषधी हरि-भक्ति ही है (५-७४)। नारायण ही सब का नायक है, दुराशा किये औरों के पीछे क्यों पडे। चैतन्य का स्वामी हरि है। सृष्टि उनकी उपजा है, अदर का अंतर्यामी श्री वेंकटेश्वर है, वे ही दिन-रात हमारी रक्षा करते हैं। फिर यह गर्व किस लिए? विनीत बनकर उनकी प्रशंसा करना ठीक हैं न? (८-२६४)। लो भगवान की भक्ति ही परम सुख है, सच, बाकी सब झूठ है, अतः उनसे भक्ति करो (६-३३)।

अन्नमाचार्य भक्ति के क्षेत्र में ऊंच-नीच का भेद नहीं मानते। उनके मत में घनिष्ट भक्ति हो तो बस, वह व्यक्ति चाहे अतिम वर्ण का हो, सचमुच ब्राह्मण के समान है (१०-१२८) जातिपाति का भाव व्यर्थ है। अजामिल आदि की क्या जाति थी? जाति भेद शरीर का गुण है। वह शरीर के साथ नष्ट होता है। आत्मा सदा शुद्ध, निर्दिष्ट और नित्य है। फिर भगवान के सच्चे ज्ञान से जो दास्य मिलता है वही एकैक उत्तम जाति है (१०-१६६, गा १५)। अन्नमाचार्य हरि-दासों की कृपा पर अतीव विश्वास रखते है। वे अपने को अकिंचन मानते है, अपनी भूल स्वीकारते हैं और अपने इष्टदेव के सामने यह विनती लेकर पहुंचते है कि हे वेंकटेश्वर, मै अतीव दुष्ट हूँ, अत्यत अलस व आज्ञ हूँ। मेरी भूलें करोडों की सख्या में हैं। कृपया मुझे आश्वासन देकर, मेरा भय दूर करके उद्धार करने का भार तुम पर है। तुम भूलो तो मेरी और क्या गति है (२-७६)।

सूरदास के विचार भी इसी तरह के हैं। वे मानते हैं कि ससार के व्यामोह में पडकर जीव उसके पीछे दौडता है और भगवान का भजन भूलता है। लेकिन वह यह नहीं, सोचता कि ससार से नही, बल्कि भगवान में ही उद्धार सभव है। ऐसा नही जानकर रे मन, जनम गवायौ, करि अभिमान विषय रस गीध्यौ, स्याम सरन नहि जायौ (३३५)। और न जाने जन की पीर, अब जब दुखित भय जन तब तब कृपा करी बलवीर (पंचरत्न, १६)। फिर वे कहते हैं, पतित पावन हरि बिरुद तुम्हारे कौन नाम धर्‍यौ, हाँ तो दीन दुखित अति दूर्बल द्वारे रटत पर्‍यौ (वही ५१)। प्रभु मेरे अवगुन चित न धरो, समदर्शी प्रभु नाम तिहारो अपने पनहि करों (वही, ६३)।

वल्लभसप्रदाय में आराध्य रूप से स्वीकृत कृष्ण के बाल और किशोर रूपों को लेकर सूर ने उन लीलाओं के वर्णन में वात्सल्य और श्रृंगार के मानों दो सागर ही निर्मित किये हैं। वात्सल्य के तो वे कवि साम्राट हैं। सच कहें तो सूरसागर का सार वात्सल्य रस ही है। वात्सल्य का ऐसा कोई भी झाकी नही जिसे सूर ने नहीं दिखाया हो। शिशु कृष्ण को पाकर माता यशोदा ही नहीं व्रज की समस्त नारियां वात्सल्य का अनुभव करती हैं। माखनचोर कृष्ण की चोरी से गोपियां अवश्य खीझ उठती हैं, किंतु चोर के क्रिया-गुण-रूपों से मन ही मन रीझ उठती हैं। फिर, जसुमति मन जो अभिलाष करे, वह देखते ऐसा लगता है कि मातृत्व का वह एकैक प्रतिनिधि है। बालक कृष्ण की विविध क्रीडाओं में सूर ने जितनी बाल-मनोदशाओं का चित्रण किया है, वह विश्व-साहित्य में ही बेजोड है। ऐसी स्थिति में किसी अन्य कवि को सूर से इस क्षेत्र में तुलना केलिए लेना व्यर्थ ही हैं, फिर भी अन्नमाचार्य की रचना में कुल ऐसे वात्सल्य-

चित्र मिलते हैं, जहा उन दोनों कवियों का हृदय-साम्य स्पष्ट झलकता है। अन्नमाचार्य बालक कृष्ण के नहलाने-धुलाने, खिलाने-पिलाने पालने में डालकर लोरियां गाने आदि में कितना ही आनद लेते हैं। कृष्ण के रेंगते चलने उठते-गिरते छोटे छोटे पग धरने, कभी परवाई देखकर पकडने को दौडने, कभी चांद को पाने केलिए रोने जैसे बाल-सहज लीला विनोदों का वे अतीव उल्लास व उत्साह से वर्णन करते हैं। माखन-चोरी, चीरहरण, मानलीला जैसे प्रसग भी अन्नमाचार्य में खूब वर्णित मिलते हैं। इतना होने पर भी वात्सल्य का वियोग पक्ष अन्नमाचार्य में ढूंढने पर भी नहीं मिलता।

वल्लभ संप्रदाय में प्रेमाभक्ति की प्राप्ति में भगवतकृपा अथवा पुष्टिका बडा महत्व माना गया है। सूरदास जी खुद भगवान से प्रार्थना के रूप में कहते है, "प्रेमभक्ति बिनु मुक्ति नहोइ, नाथ कृपा कर दीजे सोइ।" सूर ने इस प्रेमभक्ति को नवधा भक्ति में जोडकर भक्ति को दशधा माना है और प्रेम भक्ति की महिमा भी खूब गायी है। सूर की रचना में प्रेमभक्ति का प्रातिनिध्य गोपियां कहती हैं। ये कृष्ण से इतनी तल्लीन हैं कि उनकी कामरूपा प्रीति भी निष्काम सिद्ध होती है। सयोग और वियोग दोनों स्थितियों में उनका प्रेम एकरूप और अचंचल है। उनके आत्मसमर्पण व अनन्यभाव की छटा सूरसागर की दानलीला, चीरहरण लीला, रास लीला जैसों में चरम परिणति को प्राप्त हुई है। गोपियों के पूर्वराग से शुरु करके सूर ने उनके प्रेम की फल-परिणति तक का क्रमिक विकास दिखाया है। वे लोकलाज और कुल की कानि की परवाह भी नही करती। सूरदास ने राधा-कृष्ण प्रेम का भी बडे मनोवैज्ञानिक ढंग से, उसके क्रम-परिणाम के साथ चित्रित किया है। उन्होने राधा को स्वकीया दिखाया है। गोंपी व राधा-कृष्ण सयोग श्रृंगार के कितने ही अनूठे पद सूरसागर में मिलते है। यह प्रेम ग्रामीण वातावरण में, पारिवारिक जीवन में, अनुनित्य साहचर्य व सपर्क जनित होकर वैसे ही महज सुंदर विकास पाता है। फिर कृष्ण के मधुरागमन के बाद यह सब हठात् वियोग में बदल कर उद्दाम विरह व्यथा का हेतु बनता है। सूर की नायिकाओ का कृष्ण प्रेम उनकी इस वियोग दशा में और भी उज्जवल दीखता है। यह उनकी कठिन परीक्षा है, किंतु वे उसमें सफल निकलती हैं। वे उद्धव से कहती हैं, "सूर गुपाल प्रेम-पथ चलि करि क्यों दुख-सुखनि डरै।" सयोग हो या वियोग उनका हृदय कृष्णमय है। कृष्ण चाहे जहां कहीं भी रहे, उनके लिए तो पास में, उनके चित्त में ही रहते! शरीर से उनका व्रजवास है, लेकिन मन से वे कृष्ण के पास हैं।

अन्नमाचार्य की माधुर्य भक्ति में एक ओर आल्वारों के आदर्श पर चलनेवाली प्रेम-भक्ति की स्निग्ध धारा मिलती है तो दूसरी ओर भागवत पुराण, गीतगोविंद और कृष्ण-कर्णामृत में प्रतिपादित गोपी व राधाभक्ति की सुमधुर धारा भी मिलती है। इसके अलावा अपने इष्टदेव श्री वेंकटेश्वर की देवी अलवेल-मंगा के तादात्म्य में गुजरनेवाली स्वात्मीय उज्जवल भक्ति धारा भी सर्वत: सस्स्पृष्ट होकर बहती है। भगवान वेंकटेश्वर का प्राकट्य तिरुमल पहाड पर हुआ है, अत: वहां की झील, कोल, किरात नायिकाओं की सहज निर्मल प्रेम की भक्ति धारा भी यहां समान रूप से बहती दीखती है। इस तरह विभिन्न प्रेम-भक्ति-धाराओं के मेल से अन्नमाचार्य की मधुर भक्ति का प्रवाह अत्यंत विस्तृत एवं अतीव गभीर होकर, संयोग-वियोग रूपी दोनों कूलों को लाघता हुआ चलकर श्रीवेंकटेश्वर के दिव्य चरणों में विश्राम लेता है।

नायिकाभाव में अन्नमाचार्य कभी अपने को भगवान श्रीवेंकटेश्वर की देवी अलमेलमंगा मानते हे और परम पातिव्रत्य की भक्ति निभाते हैं। जब वे यह कहते हैं कि, "सखि, मै अलवेलमगा हूँ, वेंकटेश की प्रियपत्नी। सुन वे मुझसे मिले यहीं, तभी हुए हम पति-पत्नी। तो इस में 'प्रीति पुरातन' वाली बात जैसी मिलती है। वे दोनों पति-पत्नी कभी हुए। जीवात्मा और परमात्मा का सबंध अभी आज का थोडे ही है। नायक भगवान तो परम-पुरुष है। उनके न जाने कितनी ही प्रेयसियां हैं। उनमें तो इस अकिंचन नायिका की गिनती ही क्या है? फिर, जगन्नायक को इसके पास आने का अवकाश कहां? लेकिन भक्त-नायिका यह कहकर तृप्त रह जाती है कि खैर आवे तो सही, नहीं तो नही, क्या

तू तो साथ रहेगा

र० सत्येन्द्र त्रिवेदी

सब साथ छोड दे मेरा,
पर तू तो साथ रहेगा।

इस जग मे जब से आया
रहती है माया घेरे।
पर मन की डोर सभाले
रहना हे प्रभु! तू मेरे।

सब भूल मुझे भी जायें,
पर तू तो याद करेगा।

मै अंधकार में भटकूँ
तू आके ज्योति दिखाये।
पथ भ्रष्ट यदि हो जाऊँ
तू ही सत्मार्ग बताये।

मै घोर नरक में रहूँ
वहाँ तू जा के बाँह गहेगा।

श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामीजी का मंदिर
नारायणवनम्, [ति. ति. देवस्थान]

दैनिक-कार्यक्रम

१.	सुप्रभात	प्रातः ६–३० से	प्रातः ७–०० तक
२.	मंदिर के दर्वाजे खोलना	,, ७–००	
३.	विश्वरूप सर्वदर्शन	,, ७–०० से	,, ८–३० ,,
४.	तोमालसेवा	,, ८–३० ,,	,, ९–०० ,,
५	कोलुवु & अर्चना	,, ९–०० ,,	,, ९–३० ,,
६.	पहली घंटी, सात्तुमोरै	,, ९–३० ,,	,, १०–०० ,,
७.	सर्वदर्शन	,, १०–०० ,,	,, ११–३० ,,
८.	दूसरी घंटी अष्टोत्तरम् (एकांत)	,, ११–३० ,,	मध्याह्न १२–०० ,,
९.	तीर्मानम्	मध्याह्न १२–००	
१०	मंदिर के दर्वाजे खोलना	शाम ४–००	
११.	सर्वदर्शन	,, ४–०० से	शाम ६–०० ,,
१२.	तोमाल सेवा & अर्चना	शाम ६–०० ,,	,, ६–३० ,,
१३.	रात का कैंकर्य तथा सात्तुमोरै	,, ६–३० ,,	रात ७–०० ,,
१४.	सर्वदर्शन	रात ७–०० ,,	,, ८–४५ ,,

अर्जित सेवाओं की दरें

१	अर्चना & अष्टोत्तरम्	रु १–००
२.	हारति	रु. ०–२५
३.	नारियल फोडना	रु. ०–१०
४	सहस्र नामार्चना	रु. ५–००
५	पूलंगि (गुरुवार)	रु १–००
६.	अभिषेकानंतर दर्शन (शुक्रवार)	रु. १–००
७.	वाहनम् (वाहन वाहको के किराये बिना)	रु. १५–००
८.	तिरुमोरै, तेल खर्च	रु २–५०

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति ति, देवस्थान, तिरुपति.

हुआ? दुनिया चाहे जो कुछ कहे, इतना तो अवश्य कहती कि यह वेंकटेश की दासी है। इससे अधिक क्या चाहिए? ।

अन्नमाचार्य की रचना में गोपियों की श्रृंगार-भक्ति भी वर्णित मिलती है। राधा माधव लीलाओं के वर्णन मे भी कई पद मिलते हैं। फिर प्रधान नायिका अलवेलमंगा और वेंकटेश्वर के श्रृंगार-लीला-विलास-विहारों के कितने ही उज्ज्वल चित्र मिलते हैं, किंतु वे आभिजात्य वर्ग की प्रणय-लीलाओं के ढंग पर वनविहार, जलक्रीडा. आखेट लीला, कंदुक क्रीडा, नाट्यशाला में विनोद या सगीत शिक्षण के समय प्रणय जैसी बातों में चित्रित मिलते हैं। वियोग, मान आदि में यहां दूती प्रसग का अपना महत्व है, क्योंकि संप्रदाय के अनुसार दूती गुरु का प्रतीक है। उसी तरह पुरुष विरह का भी चित्र जो यहां मिलता है, वह भगवान के भक्तों के प्रति कारुण्य का ही सूचक है। जो हो, अन्नमाचार्य की रचना में मधुर रस का चाहे संयोग पक्ष हो या वियोग पक्ष, वह विशुद्ध भक्तिभाव की व्यंजना से भरा रहता है। उसमें किसी भी परिस्थिति में लौकिकता की गंध नही लगती। नायक अथवा नायिका (देवी अलवेलमगा) के लोकोत्तर दिव्य स्वरूप को अन्नमाचार्य कभी भी भुलावे में नहीं डालते। श्रृंगार भक्ति को इतने अकलुषित रूप शायद ही अन्यत्र पा सकते हैं।

अन्नमाचार्य 'हरि कीर्तनाचार्य, पद-कविता पितामह' जैसे कीर्तिनामों में विभूषित हुए तो सूरदास' सागर व पुष्टिमार्ग का जहाज' कहलाये। अन्नमाचार्य का भगवान के सूक्ष्म नंदक के अश में उत्पन्न मानते हैं तो सूरदास को उद्धव का अवतार कहते हैं तभी ये दोनों कारणजन्मा कवि अपने अपने क्षेत्रों में चिरयशस्वी बने हैं।*

(पृष्ठ 14 का शेष)

पुष्टिमार्ग में 'श्रीकृष्ण: शरणं मम'—इसे शरण मंत्र कहा जाता है। गीता में आया है—

'सर्व धर्मान परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज अह त्वा सर्व पापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुच:'

नाम श्रवण से जीव के जन्मान्तर के दोषो की निवृति हो जाती है अष्टाक्षर मंत्र के जपने से भक्ति पथ का वह अधिकारी होकर आत्म निवेदन की सामर्थ्य पा लेता है। आचार्य के मन में कृष्ण ही परम दैवत है। अपने 'अन्त: करण प्रबोध' ग्रन्थ में कहते है—

"कृष्णात् परं नास्ति वस्तुतो दोष वर्जितम"

आचार्य वल्लभ ने संपूर्ण शास्त्रों का अध्ययन करके ही यह सार तत्व जगज्जीवो के सामने रख दिया था। आगे चल कर उनके पुत्र गोस्वामी विठ्ठलनाथ जी ने भी इस अष्टाक्षर मंत्र की महिमा की खूब चर्चा की। इस महा मंत्र के प्रत्येक अक्षर का अपना अर्थ अथवा तात्पर्य है.—

श्री — धन एवं समृद्धि प्रदाता
कृ — पापो को भस्म करता है
ष्ण — ऐहिक पारलौकिक पापों का नाशक
श — आवागमन के चक्र से मुक्ति दाता
र — भगवद्विषयक ज्ञान का प्रदाता
णं — भक्ति भाव को दृढ़ करता है
म — सेवामार्ग के उपदेष्टा गुरु के प्रति प्रगाढ़ प्रेम दाता
म — भगवत् सान्निद्ध प्रदाता।

उपर्युक्त अष्टाक्षर मत्र के जपाधिकार में जाति धर्म वंश कुलादि कोई भी प्रतिबन्धक नहीं होते। प्रत्येक स्थिति में इस महामंत्र का जप विहित है। देश कालपरिस्थिति बाधक नहीं। यहीं कारण है कि गो विठ्ठलेश प्रभु-चरण ने इस महामत्र के सम्बन्ध में लिखा है—

"आनंद परमानद सायुज्यं हरिवल्लभम्।
य: पठेच्छ्री कृष्ण मत्रं सर्व ज्वर विनाशनम्॥
तं हि दृष्ट्वा त्रयोलोका: पूता: स्युः किमु मानवा:।
मध्ये च सर्वे मत्राणां मत्र राजोत्तमोत्तम:॥"

अर्थात्—यह मंत्र सब प्रकार के तापो का नाश करता है और जो भी इस मंत्र का जप करता है उसे आनंद परमानद, भगवत् सानिध्य और हरि का प्रेम उपलब्ध होता है। इस मत्र का जप करने से तीनो लोक पवित्र हो जाते है फिर मानवो की बात ही क्या? समस्त मंत्रो में यह उत्तम है और श्रेष्ठ है। यह मत्र वेद, पुराणो, गीता और श्रीमद् भागवत का सार है।

पुष्टिमार्ग में आष्टाक्षर मंत्र की दीक्षा प्रथम सोपान है। इस दीक्षा से जीव के अविद्या जन्य दोष दूर होकर उसे भगवत्सेवा केलिए आत्मनिवेदन का अधिकार प्राप्त होता है। अत आत्मनिवेदन का पुष्टिमार्ग में विशेष स्थान है। संसार की अहता-ममता त्याग कर परब्रह्म श्रीकृष्ण के चरणो में अपना सर्वस्व समर्पण कर दीनता पूर्वक अनुग्रह प्राप्त करने को 'ब्रह्म सम्बन्ध' अथवा 'आत्म निवेदन' कहते है। इस प्रकार संबन्ध स्थापन, आत्म-निवेदन और शरण गमन इन तीनो के एकीकरण को ब्रह्म सम्बन्ध कहते हैं।

आचार्य वल्लभ को सर्व प्रथम यह मंत्र स्वयं भगवान श्री गोवर्धन धर से श्रवण शुक्ला एकादशी को मध्य रात्रि में प्राप्त हुआ था जिस का संकेत अपने "सिद्धान्त रहस्य" ग्रन्थ में उन्होंने रस प्रकार दिया है—

श्रवणस्यामले पक्षे एकादश्या महानिशि।
साक्षाद् भगवता प्रोक्तं तदक्षरश उच्यते॥

जो दीक्षा मंत्र आचार्य को श्रीनाथजी से प्राप्त हुआ आचार्य ने जीवो के उद्धार केलिए उस मंत्र की दीक्षा का द्वार सब केलिए खोल दिया। उस आत्मनिवेदनात्मक मंत्र का भाव यही था कि "मै (जीव) सहस्त्रो परिवत्सरों से आप से बिछुडा हुआ हूँ। आप के विरह जन्य ताप के सुख से विरहित हो गया हूँ। अब मेरे स्त्री, पुत्र, मित्र बधु बांधव, गृह, वित्तादि यहॉ का वहाँ का मेरे देह इन्द्रिय और अन्त:करण, उन के धर्मादि सहित अपने को मै आप को सौंपता हूँ। हे कृष्ण! मै आपका हूँ।" जो जीव इस प्रकार की भावना से भगवान श्रीकृष्ण की शरण में जाते है उन को भगवान भी किस प्रकार छोड सकते है! श्रीमद् भागवत के एकादश स्कध में श्री कृष्ण ने कहा है—

"वे दारागार पुत्राप्त प्राणन् वित्त मिम परं।
हित्वामां शरणं याता: कथ ना स्त्वक्तु मुत्सहे॥"

जो व्यक्ति दारागार, पुत्राप्त, प्राण और वित्त सहित मेरी शरण में आता है, हे उद्धव! मै भी उस को किस प्रकार त्याग सकता हूँ। इन वाक्यो को प्रमाण मानकर श्री वल्लभाचार्य जी ने ब्रह्म सबंध अथवा आत्मनिवेदन की प्रणाली प्रचलित की थी, जो अब तक व्यवहार में आती है।

आचार्य ने इस महामंत्र की दीक्षा के उपरान्त ही जीव को भगवत् सेवा अथवा स्वरूप सेवा का अधिकार माना है जैसे किसी कन्या का विवाहोपरान्त ही पति की सेवा का अधिकार होता है उस प्रकार इस दीक्षा मत्र के उपरान्त ही जीव को भगवान के साकार विग्रह की सेवा का अधिकार होता है।

इस प्रकार पुष्टिमार्गीय दीक्षा में जागतिक वस्तु एवं उन के सम्बन्धो से क्रमश: अहं-ममता के विसर्जन का सरल मार्ग उपदिष्य है। समर्पण और सेवा यही पुष्टि भक्ति के दो बीज तत्व है।

गोविन्दराज स्वामी मन्दिर में स्थित गरुडवाहन पर विराजमान विष्णुमूर्ति.
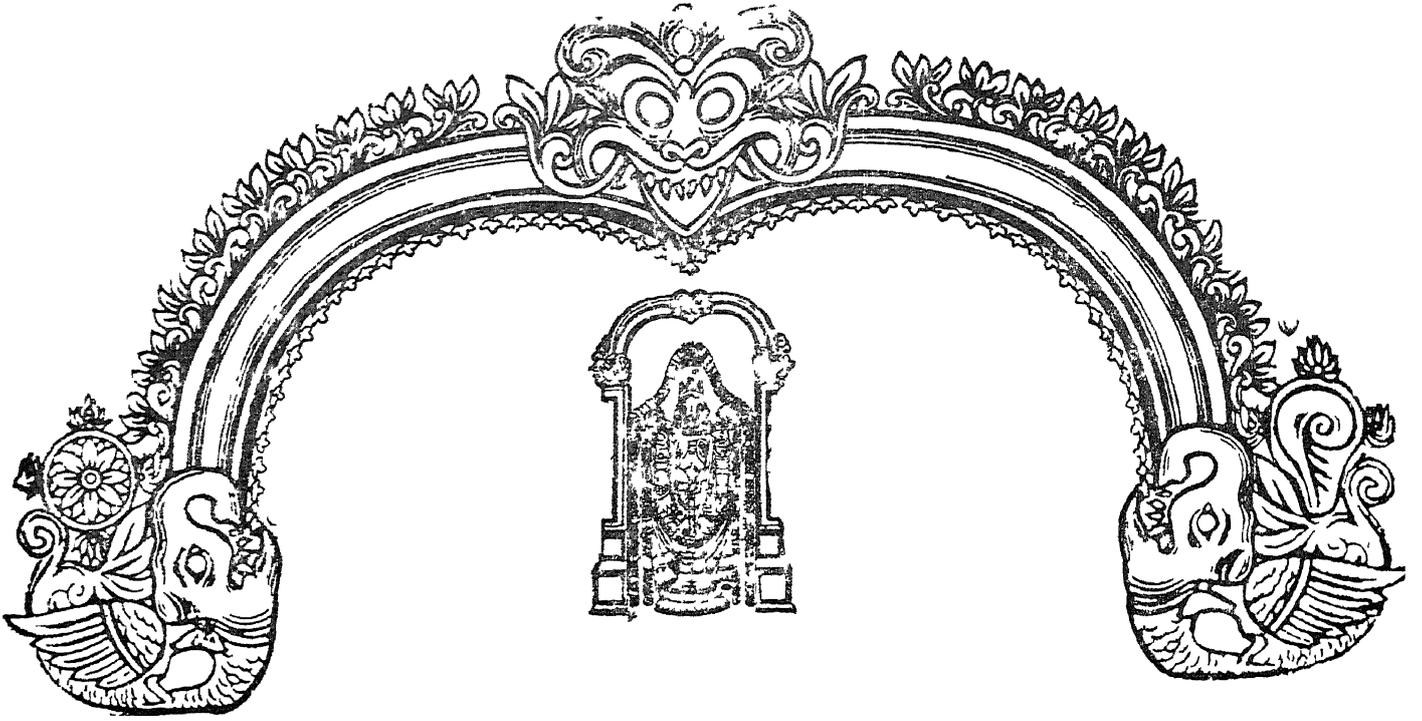
तिरुमल – यात्रियों को सूचनाएँ

भगवान बालाजी के दर्शन

ति. ति देवस्थान को यह विदित हुआ कि कुछ धोखेबाज व्यक्ति यात्रियों से पैसे लेकर भगवान के दर्शन शीघ्र ही करवाने का वादा कर रहे हैं

देवस्थान यात्रियों को विदित कराना चाहता है कि जहाँ तक संभव हो एक संयत एवं क्रम पद्धति में भगवान बालाजी के दर्शन कराने का भरसक प्रयत्न कर रहा है। प्रतिदिन दस हजार से अधिक यात्री भगवान बालाजी का दर्शन करने आते हैं और दर्शन की सुविधा केलिए दिन में १४ घंटे का समय मंदिर का द्वार खोल दिया जाता है जिस में ११ घटे सर्वदर्शन केलिए नियत है। यदि यात्रियों की भीड अधिक हो तो क्लोजड षेड्स से और अधिक न हो तो सुरक्षित महाद्वार से दर्शन का प्रबध किया जा रहा है।

वे यात्री जो समय के अभाव, अस्वस्थता अथवा अन्य किसी कारणवश क्यू में खडे नहीं सकते वे प्रति व्यक्ति रु. २५/- मूल्य का टिकट खरीद कर मंदिर के अन्दर ही ध्वजस्तंभ के पास से क्यू में शामिल हो सकते हैं जिस से कि उन को ५ मिनट के अन्दर ही भगवान के दर्शन प्राप्त हो सके।

यात्रियों से ति. ति. देवस्थान का निवेदन है कि वे बाहरी व्यक्तियों की सहायता से दर्शन प्राप्त करने का प्रयत्न न करे। शीघ्र दर्शन की सुविधा केलिए ति. ति देवस्थान के द्वारा जो उत्तम प्रबंध किये गये हैं, कोई कभी व्यक्ति भगवान का दर्शन उससे शीघ्रतर रवाने में असमर्थ है। अतः कृपया यात्रीगण ऐसे धोखेबाजों की झूठे वायदों से हमेशा सतर्क रहें।

भगवान के दर्शन प्राप्त करने में जो विलंब और प्रतीक्षा करने से जिस सहनशीलता का अभ्यास होता है, वह तो कलियुगवरद श्री वेंकटेश्वर के दर्शन प्राप्त करने केलिए अपेक्षित ही है और वह एक प्रकार की तपः साधना भी है जिस के द्वारा भगवान का संपूर्ण अनुग्रह प्राप्त होता है।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,

ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

कबीर एक अनुशीलन

हिन्दी साहित्य में भक्तिकाल स्वर्णयुग माना जाता है। भक्तिकाल की दो प्रमुख धाराएँ मानी गयी, एक तो निर्गुण धारा, दूसरी सगुण धारा। प्रत्येक की दो दो शाखाएँ हैं। निर्गुण धारा की ज्ञानमार्गी शाखा के प्रमुख प्रवर्तक माने जाते है — महात्मा कबीरदास।

हिन्दी के काव्य साहित्य में निर्गुण की भावना १५ वी शताब्दी में दिखाई देती है, लेकिन हमारे देश केलिए यह कोई नयी भावना नहीं है। इस देश के मानव ने सदैव से परलोक की साधना में अपने जीवन की सार्थकता स्वीकार की है।

चाहे, निर्गुण पन्थ को चलानेवाले अन्य महात्मा कितने भी क्यो न हो? लेकिन जन साधारण ही नही, विद्वानों में भी कबीर की जितनी प्रतिष्ठा और नाम है, उतना अन्य किसी को न मिला। क्यों कि कबीर के उपदेश, वाणी, सिद्धात वगैरह इतने तीखे ही नहीं, वरन् सच भी हैं कि अन्यान्य कवि उस पन्थ में कबीर के सामने फीके पड गये।

कबीर के जन्म, माता-पिता और वगैरह के बारे में विद्वानों में मतभेद है। अतः ठीक ठीक निर्णयात्मक विधान से उनके जीवन विषयों के बारे में हम बता न सकते।

जो भी हो, आप का जन्म चौदहवीं शताब्दी के अंत और पद्रहवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुआ होगा। नीरू और नीमा आप के पोषक माता-पिता माने जाते हैं। वे मुसलमान जुलाहे थे। प्रायः कुछ कारणों से आप की पढाई-लिखायी न हुयी। तो भी तीक्ष्ण प्रतिभा के कारण दुनियादारी

और समझदारी ही नहीं बल्कि ज्ञान के सभी विषयों को हृदयंगम कर लिया। आप निर्भीक और फक्खड स्वभाव के थे और घुमक्खड होने के कारण साधुसतों के सत्सग से आत्मा परमात्मा, माया-ससार आदि वेदांत के सभी विषयों के ज्ञान को प्राप्त कर चुके थे।

आप रामानद जी को अपने गुरु मानते थे। आप ने गुरु को भगवान से श्रेष्ठ माना है, और गुरु की महत्ता को प्रकट किया है। निम्नलिखित उदाहरण से यह विषय स्पष्ट होता है। —

"गुरु गोविन्द दोनों खडे, काके लागू पाया।
मैं बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो बताय॥"

ए. सरोजिनी,
टि. नगर, तिरुपति.

आप बाह्याडम्बर, व्यर्थ के आचार विचार, ऊँच-नीच आदि धार्मिक, सामाजिक अन्याय और विषमताओं के कट्टर विरोघी थे। एक दृष्टि से देखें, तो आप केवल समाज-सुधारक ही नहीं, बल्कि धार्मिक समन्वयवादी एवं सुधारक माने जा सकते हैं। आप ने भारतीय सभी दर्शनों का श्रुतज्ञान प्राप्त करने के साथ साथ अद्वैतवाद, योगमार्ग आदि का सपूर्ण परिचय पा लिया। हमारे दार्शनिक, वेदांती और कुछ भक्त भगवान को निराकार, निर्गुण मानते हैं और कुछ साकार और सगुण सा मानते है। कबीर अद्वैतवाद के अनुसार भगवान के निर्गुण रूप के हामी ही नहीं, कट्टर प्रचारक भी थे।

आप ने भगवान को : —

"जैसा ढूढ़त मै फिरौ, तैसा मिला न कोय।
ततवेता, तिरगुन रहित, निर्गुण से रत होय॥"

त्रिगुणातीत, निर्गुण माना है। आप भगवान को "राम" मानते हैं और बार बार "राम रसायन" को पीने और पिलाने के लिए कहते हैं। लेकिन खुद आप ही बताते हैं कि मेरा राम :—

"दशरथ सुत तिहु लोक बखाना" नही है।

आप के ईश्वर सबन्धी विचार बहुत ऊँचे हैं। इन पर शंकरवाद का पूरा प्रभाव पडा था। हिन्दू प्रथा के अनुसार आप जीव को "दुलहिन" माना है और परमात्मा को "प्रियतम" बतलाया है। आप ने भगवान को अपने में ही समझकर जीव का विरह वर्णन बडी सरसता के साथ किया है। निम्न लिखित उदाहरण में उपर्युक्त विषय स्पष्ट हो जाता है :—

"प्रीतम को पतियाँ लिखू, जो कहुँ होय विदेस।
तन में मन में नैन में, ताको कहाँ संदेस॥"

आप उपनिषदों के "सोहम्," "अह ब्रह्मास्मि" के प्रतिपाद्य को मानकर ईश्वर को वस्तुतः निराकार और निर्गुण माननेवाले थे। देखिए, निर्गुण ब्रह्म की व्यापकता कितने उदात्त उदाहरण के द्वारा व्यक्त की है :—

"पारब्रह्म के तेज का, कैसा है उनमान।
कहिबे कू सोभा नही, देख्या ही परवान ॥"

कबीर की रचनाओं में सत्य का नग्न स्वरूप है। सत्य-धर्म के विरुद्ध जो बातें इन्होंने देखी निम्संकोच होकर उनकी कडी आलोचना कर डाली। महात्मा कबीर अपने सिद्धान्तों का प्रचार करने केलिए "पद" बनाया करते थे। उनके शिष्यों ने इन पदों और छन्दों को लिखकर "कबीर बीजक" नामक ग्रन्थ के रूप में उपस्थित कर दिया। इसमें वेदांत तत्व, फटकार, अनित्यता, माया, छुआ-छूत, नीति, उपदेश आदि विषय भरे हैं। कबीर की वाणी रुचिर रूपकों तथा अनूठी अन्योक्तियों के द्वारा प्रेम की ऐसी व्यंजना करती है कि सुननेवाले का हृदय तडप उठता है और चोट खाकर लोटपोट हो जाता है। एक उदाहरण देखिए :—

"पानी केरा बुदबुदा, उस मानस की जाति।
देखत ही छिप जायेगा, ज्यौ तारा प्रभाति ॥"

इस दोहे में उपमा और दृष्टान्त अर्थालकारों का प्रयोग हुआ है। कबीरदास जी के काव्य में रहस्यवाद की माला ज्यदा झलक पडती है :—

"जल में कुम्भ, कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुम्भ जल जलहि समाना, इहि तथ कथ्यौ ग्यानी ॥"

आप की दृष्टि में हिन्दू और मुसलमान दोनों में भेद न था। आप हिन्दू और मुसलमानो से सवाल करते हैं :—

"तुरक मसीत, देहुरै हिन्दू,
दुहुठा राम खुदाई।
जहाँ मसीत, देहुरा नाहि,
तहाँ काकी ठकुराई ॥"

इससे मालूम होता है कि ऐसे विभाजन और दीवार आप को पसद नहीं थी। मनशुद्ध रखे बिना बाह्य आडम्बरों के द्वारा निर्गुण की उपासना असभव है, यह भाव निम्न दोहों के द्वारा व्यक्त होता है। :—

"माला फेरत जुग भया, फ़िरा न मन का फेर।
कर का मनका डारि दे, मन का मनका फेर ॥"

"माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख माही ॥
मनुआ तो दहु दिसि फिरै, यह तो सुमिरन नाहि ॥"

लौकिक व्यवहार और साधारण जनता की समझ में आने केलिए कही-कही आप ने ब्रह्म को सगुण माना, तो भी वह केवल व्यावहारिक पक्ष का प्रतिपादन मात्र है। आप का ब्रह्म स्वरूप केवल अनुभवैकवेद्य है, उसका वर्णन वाणी से करना असभव है। इस अनुभव की कबीरदास ने "गूँगे के गुड के स्वाद" के साथ उपमा देकर उसे अनिर्वचनीय कहा है। उपर्युक्त सभी बातों से हमें मालूम होता है कि कबीर निर्गुण धारा के प्रबल समर्थक थे।

इस छोटे से लेख में कबीर की निर्गुण धारा की समग्र आलोचना करना समुद्र के पानी को घडों से उडेलने के बरावर है। विज्ञपाठक मेरे अधूरे ज्ञान को क्षमा कर इस में कुछ न कुछ सार मिलता तो परखकर अनुगृहीत करते तो, अपने को धन्य समझती हूँ।

गोवर्धन गिरिधर देव गोवुमल काव श्रीमहानु-
भाव।
वरगलनीव देव श्रीवल्लभ दयमाडेन्नोलु ईवेलेगे
इंदिरे रमण ।।"

(हे श्रीपति, रावणांतक, गायो को चराने-वाले गोवर्धन -गिरिधारी देव वरदायक महानु-भाव, मैं आप का सेवक हूँ। हे इंदिरारमण, मुझे आपके पादारविन्दो की सेवा करने का वर प्रदान कर मेरी रक्षा कीजिये।)

आत्मनिवेदन

जब तक मानव में यह भाव और दृढविश्वास उत्पन्न नहीं होता कि मैं अकिंचन हूं और जो कुछ काम मैं कर सकता हूँ वह भगवान की ही कृपा से होती है, तब तक पूर्णभक्ति प्राप्त नहीं होती। अहंभाव के निरसन से ही काम-क्रोध आदि अरिषड्वर्ग विजित होते है। भगवान में र्वाणत गोपियों की आत्मनिवेदनासक्ति आदर्श-प्राय तथा सद्भक्तो से अनुकरणप्राय है।

कबीरदासजी से आत्मनिवेदन की महिमा निम्न प्रकार गायी गयी है।

"भौसागर अथाहजल ता में बोहिथ राम
आधार।
कहे कबीर हम हरिसरन तब गोपद खुद
विस्तार।।"

विजयदासजी - कृत आत्मनिवेदन का एक पद सुनिये।

"हरिये निन्नाधीन ज्ञानेंद्रियगलु हरिये निन्नाधीन
कर्मेंद्रियगलु।
हरिये निन्नाधीन पंचभूतात्मकगलु हरिये निन्ना-
धीन मनचित्तादिगलु।
कुणिसिदरे कुणिवे नगिसिदरे नगुवे मणिसिदरे
मणिवे अलिसिदरे अलुवे।।
उणिसिदरे उणुवे उडिसिदरे उडुवे मनुजवेषते
सिरिविजयविठलनोने। दणिसिदरे दणिवे तेन-
वित्तरे नेनेवे"।।

(हे हरि, ज्ञानेंद्रिय, कर्मेंद्रिय, पंचभूतात्म, मन, चित्त, चेतन सभी क्रियायें आपके अधीन है आप नचाएगे तो मैं नाचूंगा हँसाएँ तो मैं हँसूँगा रूलाएँ तो रोऊंगा, खिलाएंगे तो खाऊंगा पहनावें तो पहनूंगा, मनुजो में आविर्भूत हे विजय विठ्ठल, आप थकावे तो मैं थकूंगा वैसेही अपने स्मरण दिलावेगे तो आप का मैं स्मरण करूंगा। भगवान में र्वाणत माधुर्य भक्ति आत्मनिवेदन का ही शुद्ध रूप है।

माधुर्य भक्ति

श्री व्यासराय की वाणी में विरहभक्ति का उद्गार सुनें—

"अगलिसैरिसलोखो वेणुगोपान निन्नमगलि
सौरिसलारेवो।
नगधर पन्नगनगधीश मृगमदतिगुरिद। नगे
मोग चन्निग निगमगछिगे सिगदगणित सुगुण
निन्न।"

(हे मुरलीधर! हम विरह-ताप को नहीं सह सकते। हे गोवर्धनधारी, शेषशैलाधिपते, प्रेमी हरिण के जैसे मुस्कुराते हुए सुन्दर मुखवाले, वेदो के लिए भी वर्णन करने असाध्य गुणवाले हे प्यारे, हम तुम से अलग नहीं रहसकते।)

श्रीपुरन्दरदास की माधुर्य-भक्ति से पूर्ण विरह वेदना का वर्णन सुनिए:—

"तुंबितु बेलदिंगलु ई वनदोलु तुंबितु बेलदिंगलु।
तुबितु बेलदिंगली वनदोलगेल्ल।
अंबुजनाभनु बार काणक्क।।

श्री पादरायस्वामी एक भ्रमर को देखकर अपने विरह-प्रलाप निम्नांकित पदो से व्यक्त करते हैं।

(शेष पृष्ठ ३१ पर)

ब्रह्मोत्सव के अवसर पर विद्युत दीपालंकृत महाद्वार गोपुरम, गोविंदराजस्वामी मंदिर तिरुपति
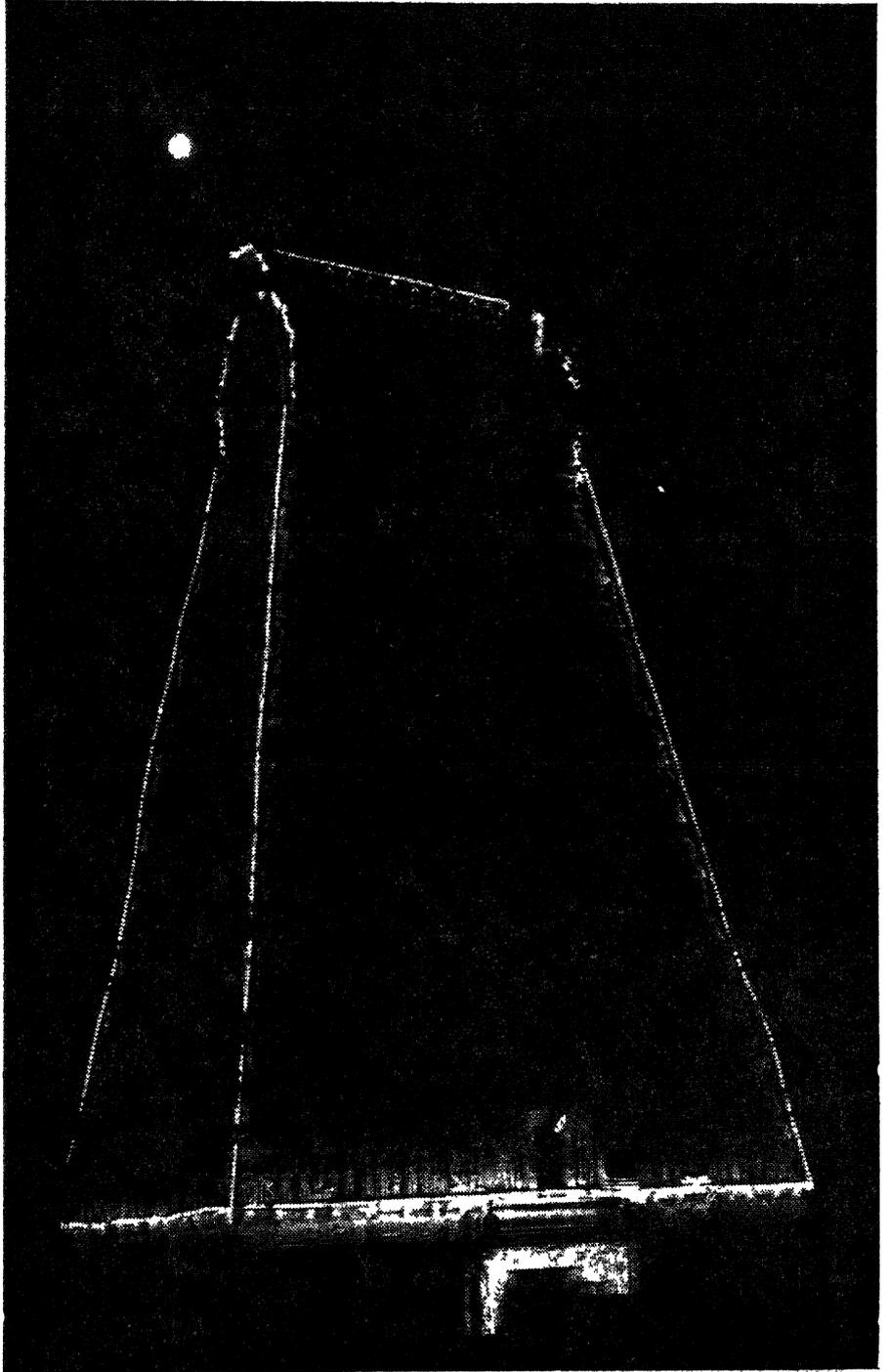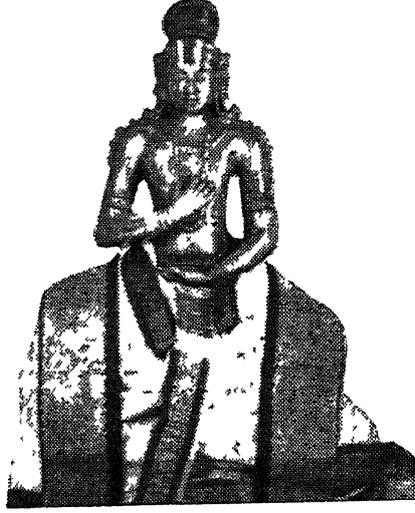
नम्माल्वार

पालनकर हे वकुलाभरण
भक्तसमूह को जगदाभरण
सज्जनलेते तेरी शरण
तुझसे डरता हमेशा मरण।
तेरे जनक करियार थे
तेरे जननी उडैयनंगै थी
तिरुनगरी में जन्म लिया था
देवों को पास खींच लिया था।
शठनाम की पवन डरकर भागी
तुझसे सबको शठ जो बनाती
निकली तिरुवायमोलि त्वन्मुख से
जो है मिलाती नर को विभु से।
मधुरकवि तुझे ढूँढकर आए
सरयू नदी से सब को प्यारे
तुझ पर उन्होंने मधुर गीत गाए

इसलिए वे मधुरकवि कहलाए।
विष्णुस्थलों को बाकी आळवार
पैदल गए सब दर्शन करने
विविधस्थलों के नाथ सब मिलकर
तेरे दर्शन पाने आए
नम्माळवार की उपाधि पाकर
सबको बनातू हमेशा हितकर!
'कंबन' जैसे विश्रुत कविवर
मान गए तुझे अपना गुरुवर।
ग्रंथारंभ में कंबन कविवर
स्मरण करता है तेरा गुरुवर!
त्वन्महिमा से विल्लिपुत्तूरार
बने तमिल के नामी कविवर।
कहलाता है 'सामवेदसार'
तेरा ग्रंथ तो तमिल में, गुरुवर!

यद्यपि तूने विष्णु की स्तुति की
तो भी किसी की नफरत नही की।
रामानन्दजी धार्मिक गुरु थे
समन्वयकारी रामानुज के
रामानन्दजी भू पर चमके
त्वद्भक्ति भवन का स्तभ बन के।
तिंत्रिणी तरु के नीचे बैठकर
पावन किया उसे तू ने गुरुवर!
अब भी तिंत्रिणी पवित्र करती
सबको, तेरीसगति रखती।
नाथमुनि के स्वप्न में आकर
तिरुवायमोलि का उपदेश किया
उन्होंने उसको निधिमा पाकर
भक्तसमूह को यहाँ अर्पण किया।

श्री के. एन. वरदराजन्, एम.ए. बी.एड,
कल्पाकम

(पृष्ठ १९ का शेष)

अ) "भृग निन्नट्टिदने श्रीरग मधुरेलि निदु ।
अगजलुब्धक पोगोलल तडेयनिक्ति । हिंग-
सुत्तिदाने असुव हे कितव ।।"

(हे भ्रमर, क्या श्रीरगनाथ मधुरा में ठहर-कर लुब्धक कामरूपी सोने की मुरली द्वारा व्याध बनकर हमारे प्राणो को सता रहे है ?)

आ) विधिगे दयविल्लवक्क एन्नमेले यदुपतियनग-
लिसिदनोम्मिद ओम्मे ।
हक्किय मेलुल्लदयवन्नु नम्म मेले इक्कदे होदे-
येतक्को विधिये ।
अक्कटक्कट रेक्के एरडुल्लरे मथुरेगे पोगि
नवकने श्रीहरियन्नुकूडुतिद्दे्वल्ल) ।

(हे विधाता, तुम पक्षियो पर जितनी कृपा दिखाते हो उतना भी कृपा हम पर क्यो नहीं दिखाते ? हाय, हाय, अगर हमारे दो पख होते तो कितना अच्छा होता ? हम मथुरा जाकर श्रीहरि से मिल जाते । हे बहिन् विधि हमपर वहुत निर्दयी है । उससे हमे बारबार यदुपति से अलग होकर विरहवेदना सहना पडती है ।

श्रीगोपालदास की विरहव्यथापूर्ण माधुर्यभक्ति का नमूना देखिए—

मनि तप्पि देवो नावु सतियरेल्लोदागि रथव
निल्लिसदे होदेवो उद्धव ।
हितरागु नमगे सारथि नीनु दोरेतिरे यतन माडु-
तलिद्देवो उद्धव ।।
पथव तोरिसो नमगे मदेम्म चेलव श्रीपतियु
बदोदगुवते उद्धव ।
गतियारो अवन्होरतु गोपालविठलाच्युतन महिमे
काणेवो उद्धव ।।"

(जब हमारे प्यारे श्रीकृष्ण को लेकर रथ चलने लगा तो क्या हम सब नारियाँ पागल हो गयीं ? चलते रथ को हम गोपियो ने नहीं रोक कर बड़ी भूल की । हे उद्धव, तुम्हारे जैसे सारथी मिल जातेतो हम सचमुच उसे रोकते । हे उद्धव श्रीपति को प्राप्त करने का उपाय बताओ । महिमान्वित गोपाल विठलाच्युत के बिना हमारे रक्षक कौन है ?)

उपर्युक्त उदाहरणो से यह स्पष्ट होता है कि गोपीकृष्ण प्रेम जिस प्रकार महर्षि शुक-प्रणीत भगवान में वर्णित है उसकी परपरा कर्णाटक के भागवत हरिदासों से पूर्णतया प्रचारित हुई है।

मीराबाई की पदावली के अन्तर्गत बाललीला वशीवादन लीला, नागलीला, चीरहरण लीला, मिलन लीला, पनघटलीला, फागलीला और दधिबेचनलीलाएँ क्रमशः वर्णित है । अक्रूर तथा उद्धव सबधी उल्लेख बालक्रीडाओ के अतिरिक्त गार्हस्थ्यजीवन, करुणा - पूर्ण तल्ली, नता एव पश्चात्ताप आदि प्रसग भी कम प्रभाव कारी नहीं है । इन सबसे अधिक माधुर्य-भक्ति मीराबाई की विशेषता है । माधुर्यभक्ति में भी गाढ विरहासक्ति के वर्णन मीराबाई की विशिष्ट देन है ।

उदाहरणार्थ निम्नांकित पद द्रष्टव्य है ।

अ) "डरि गयो मनमोहन पासी । टेक
आबा की डाली कोइल इक बोअ, मेरा मरण
अरुजग केरी हाँसी ।।
विरह की भारी मैं बन बन डोलूं प्रानतजूं
करवत ल्यूं कासी ।
मीरा रे प्रभु हरि अविनासी तुम मेरे ठाकुर
मैं तेरे दासी ।।"

आ) 'भाई म्हारी हरिहू न बूझ्या बाटा ।टेक।
पड मास, प्राण पापी, निकसि क्यूणा जात ।
पटाणा खोल्या मुलाणा बोल्या, साझ भया
परभात ।।"

डा० बदरीनारायण श्रीवास्तव का विचार है कि हिन्दी साहित्य की राम - भक्ति धारा में माधुर्य - भक्ति के प्रथम प्रवर्तक अग्रदेव है और वर्तमानकाल में सखी भाव की भक्ति रामानन्द सप्रदाय की प्रधान भक्ति पद्धति हो गयी है । इस प्रणाली के भक्त कवियो में अग्रदेव नामदेव कृपानिवास, बालअली, रामचरणदास युगलो-प्रियाजीवाराम युगलानन्दशरण जनकराजकि-शोरीशरण और मधुर अली के नाम विशेष उल्लेखनीय है । उनकी रचनाओ में श्रृंगारादि चेष्टाओ का वर्णन करते समय अश्लीलता भी आगयी है और परिणाम स्वरूप साहित्य की दृष्टि से वे निम्न कोटि की है । केशवदास के समय के समस्त हिन्दी साहित्य रीतिकालीन विचार - धारा तथा माधुर्य - भक्ति के वर्णन में व्यस्त हो गया ।

सख्य भक्ति

उत्तरभारत की कृष्ण - भक्ति धारा मुख्य रूप से सख्य - भक्ति से सबंधित है। श्रीवल्लभा-चार्य का दृढ विश्वास था कि दास्य - भक्ति से सख्य भक्ति ही श्रेष्ठ है और उन्हीं के आदेश के अनुसार सूरदास नें अपनी विशिष्ट कृति सूर-सागर में सख्य तथा वात्सल्य - भक्ति केलिए दास्य - भक्ति की अपेक्षा अधिक प्रधानता दी । सख्य भक्ति की प्रशसा मे सूरदास की वाणी सुनें ।

"ऐसीप्रिति को बलि जाउँ ।
सिंहासन तीज चले मिलन को सुनत सुदामा
नाऊँ ।
कर जोरे हरि विप्र जाति कै हित करिचरन
पखारे ।
अक माल दे मिलै सुदामा अधासब बैठारे ।
सूरस्याम की कौन चलावै, भक्तनि कृपा
अपार ।।"

"हरि सौ भीत न देख्यौ कोई, विपति काल
सुमिरत तिहि औसर आनि तिरछो होई ।"

"मोहि प्रभु तुम सो होडपरी ।
ना जानौ करिहौ व कहा तुम नागर नवल
हरी ।।"

गोपबालको के साथ उनके मित्र श्रीकृष्ण की बाललीलाओ का वर्णन सुनें ।

"खेलत स्याम सखा लिये संग ।
इक मारत इक रोकतगेंद, इक भागत करि
नाना रंग ।"

वात्सल्य भक्ति

भागवत तथा नालायिर प्रबन्धम् में जो श्री कृष्ण की बाललीलाओ का वर्णन है । वह वात्-सल्य भक्ति का निरूपण ही है । कर्णाटक के हरिदास तथा उत्तर भारत की कृष्ण भक्ति धारा के कवियो ने उसी वात्सल्य भक्ति को अपनी कृतियो के द्वारा प्रकाशित करके गृहस्थो को भी अपने सांसारिक जीवन के दैनंदिन कर्तव्यो के निर्वहण करते अपने बाल - बच्चो को पालते पोसते समय भी भगवद्भक्ति को भुलाने नहीं दिया । जब कभी अपने बाल - बच्चे शोर मचाते, नटखटी करते या खेलते कूदते उन्हे देखकर ही भारतीय नारियो को भगवान की बालक्रीडाओ की स्मृति से उनकी महिमामय लीलाओ का एव आध्यात्मिक रहस्यो का बोध स्फुरित होने लगता है । उनकी कौटुबिक परि-स्थितियों के विपरीत उनको आध्यात्मिक शान्ति सहज रूप से प्राप्त होने लगती है ।

(क्रमशः)
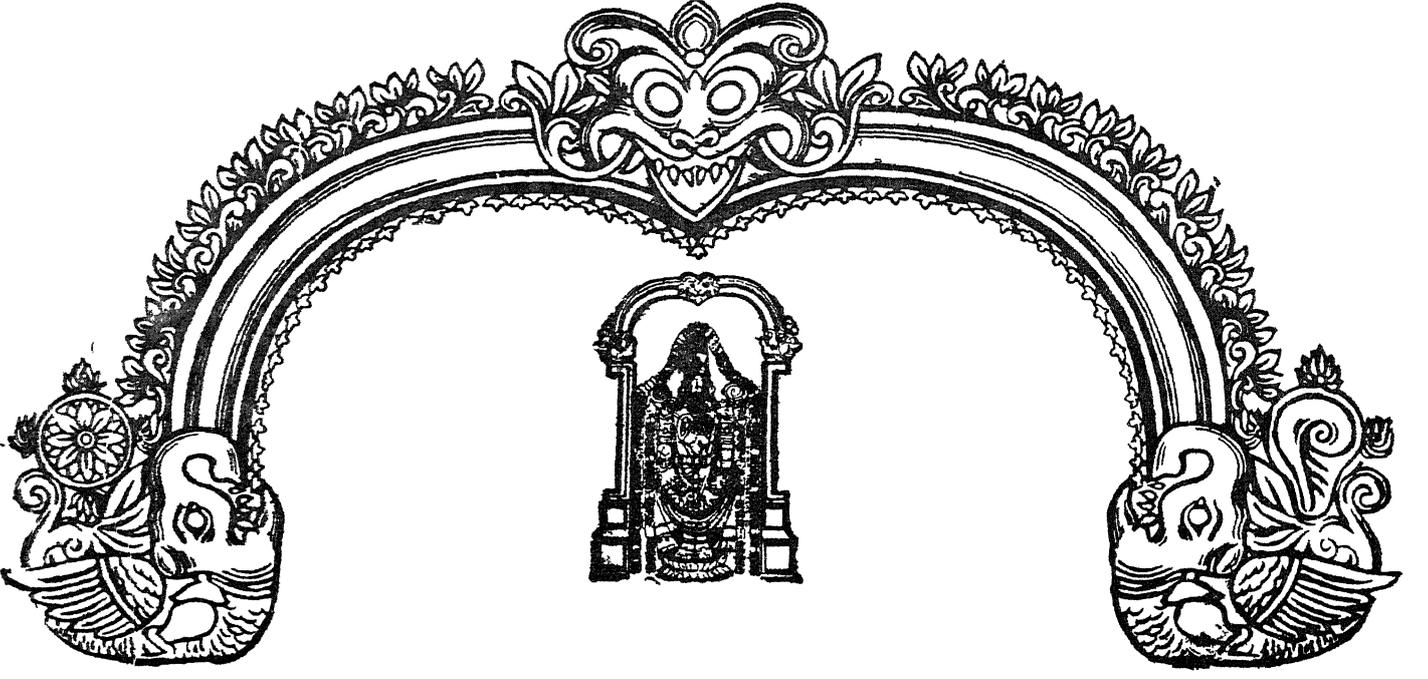
तिरुमल तिरुपति देवस्थान, तिरुपति.

तिरुमल अथवा तिरुपति में गृहवसति केलिए आरक्षण

ति. ति. देवस्थान ने यात्रियों को तिरुमल तथा तिरुपति में आवास वसति केलिए अनेक सुविधाओं का प्रबंध किया है। तिरुमल पर करीब ५०० सुविधाजनक (Furnished) काटेज तथा मुफ्त धर्मशालाएँ और तिरुपति में १०० सुविधाजनक कमरे और धर्मशालाए हैं।

प्रतिदिन करीब १०,००० यात्री तिरुमल तथा तिरुपति का दर्शन करते हैं। जो यात्री सुविधाजनक गृहवसति प्राप्त करना चाहते हैं उनको पहले ही आरक्षण करा लेना चाहिए।

तिरुपति में एक दिन गृहवसति केलिए रु १२/–, रु. १०/– या रु. ६/– रिशेप्शन अफसर, ति. ति. देवस्थान, तिरुपति के पते, पर आरक्षण शुल्क भेजकर आरक्षण करा सकते हैं। उसीप्रकार तिरुमल पर गृहवसति केलिए आरक्षण (एक दिन केलिए रु. २०/– रु. १६/–, रु. १२/–, रु १०/–, रु. ९/– अथवा रु. ५/–) शुल्क रिसेप्शन अफसर, ति ति. देवस्थान, तिरुमल के पते पर भेजकर आरक्षण करा सकते हैं।

तिरुपति अथवा तिरुमल पर गृहवसति केलिए कम से कम एक सप्ताह के अन्दर सम्बद्ध रिसेप्शन अफसर के पते पर डिमाण्ड ड्राफ्ट अथवा मनीआर्डर सहित निवेदन पत्र भेजना चाहिए।

१. गृहवसति केलिए आरक्षण करानेवाले यात्री के परिवार के सदस्यों की संख्या।

२. तारीख, जिसदिन गृहवसति अपेक्षित है। ३. चुकायी गयी रकम।

निवेदक के सदस्यों की सख्या तथा उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप उपस्थित गृहवसति के सुविधानुसार देवस्थान आरक्षण करेगा। अपेक्षित दिन केलिए गृहवसति नहीं प्राप्त हो तो आरक्षण शुल्क वापस भेज दिया जायगा। यदि गृहवसति प्राप्त हो तो निवेदक एक को आरक्षण कार्ड भेजा जायगा। तिरुमल अथवा तिरुपति पहुँचने पर गृहवसति के लिए यात्री को कार्ड पर सूचित देवस्थान को पूछ-ताछ कार्यालय में इसे दिखाना चाहिए। यदि कार्ड नही दिखा सकें तो कम से कम मनिआर्डर अथवा बैंक ड्राफ्ट रसीद के दिखाना चाहिए। अन्यथा गृहवसति का प्रबन्ध नहीं किया जायगा।

यात्रियों से निवेदन है कि आरक्षण जिस दिन केलिए निश्चित है उस दिन प्रातः ८ बजे से लेकर दूसरे दिन प्रातः ८ बजे के अन्दर यात्री आवास सुविधा का अनुभव कर सकते हैं। यदि यात्री लोग इस निश्चित समय पर गृहवसति का अनुभव नहीं कर सकें तो आरक्षण शुल्क वापस नहीं दिया जायगा। अथवा अन्य दिन केलिए आरक्षण बदला भी नहीं जायगा। आरक्षण केवल एक दिन के लिए और अधिकतम दो दिनों के लिए ही होगा। साधारणतः उस से बढकर अधिक दिनों केलिए आरक्षण नहीं दिया जायगा।

देवस्थान की धर्मशालाओं में मुफ्त में गृहवसति मिलती है। इस केलिए आरक्षण नही किया जाता है। जो यात्री पहले आयेंगे उनको उपस्थित गृहवसति के अनुसार कमरे दिये जायंगे।

कार्यनिर्वहणाधिकारी,
ति. ति. देवस्थान, तिरुपति.

हनुमान स्तुति

चमकता बहुत तेरा ब्रह्मचर्य।
करता रहता अपना कर्तव्य।

क्या किया? राम आया तेरे पास?
भाग्य क्या तू बना राम दास।

अंजना तेरी माता, पवन तेरा पिता,
भीम तेरा भ्राता, रामायण सुनने तू
आता।

उड गया सीता को ढूँढने को।
धन्य समझा इससे अपने को।

पार किया अखंड सागर!
क्या होता इसका बराबर!

दर्शन किए सीता के, अशोक वन में,
खुश हुआ अत्यधिक उस क्षण में।

सुनाई राम की बात उसको।

दिया आशीर्वाद सीता ने तुझको।

दे दी अंगूठी राम की, सीता को।
दे दी चूडामणि सीता की, राम को।

दहन किया जल्दी लंका को।
डराया इससे दुष्ट रावण को।

मूर्छित लक्ष्मण इंद्रजित के बाण से।
बच गया वह तेरी सजीवी से।

प्राप्त की शान्ति राम ने तुझ से।
मिली शान्ति सब को इस से।

करता जप सदा राम-राम।
लेता नहीं कभी आराम।

लाभ न सोचता, जपता राम-नाम।
बिना तेरी माँग, देता सब राम।

करता सब काम, लेकर राम नाम।
करता सब काम पावन राम नाम!

घमंड रखा बल पर भीम ने।
चूर किया एक दिन तू ने।

एक को पकडकर जीवन में,
दो को करता जप मन में!

सब की रक्षा करता तू।
सदा केलिए रहता तू!

देना अपने मन में उसे जगह।
देगा वह यहाँ ऊँची जगह।

करो तुम हनुमान की स्तुति।
होगी जरूर तुम्हारी प्रगति।

श्री के. एस. शंकरनारायण,
कल्पाक्कम

पृष्ठ ६ का शेष)

श्री वेङ्कटेश प्रपत्ति·

ईशानां जगतोऽस्य वेंकटपतेर्विष्णोः परां प्रेयसीं
तद्वक्षःस्थल नित्यवासरसिकां तत्क्षांतिसर्वधि-नीम् ।
पद्मालंकृतपाणिपल्लव युगा पद्मासनस्थां श्रियं
वात्सल्यादि गुणोज्ज्वलां भगवतीं वन्दे जगन्मातरम् ।।

श्रीमन्! कृपाजलनिधे! कृतसर्वलोक!
सर्वज्ञ! शक्त! नतवत्सल! सर्वशेषिन्!
स्वामिन्! सुशील सुलभाश्रित पारिजात!
श्रीवेंकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

आनूपुरार्पितसुजात सुगन्धि पुष्प
सौरभ्यसौरभकरौ समसन्निवेशौ ।
सौम्यौ सदानुभवनेऽपि नवानुभाव्यौ
श्रीवेंकटेशचरणौ शरण प्रपद्ये ।।

सद्योविकासिसमुदित्वरसान्द्रराग
सौरभ्य निर्भरसरोरुहसाम्यवार्ताम् ।
सम्यक्षु साहसपदेषु बिलेखयन्तौ
श्रीवेंकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

रेखामयध्वजसुधाकलशातपत्र
वज्रांकुशांबुरुह कल्पक शखचक्रै ।
भव्यैरलंकृततलौ परतत्त्व चिह्नैः
श्रीवेकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

ताम्रोदरद्युति पराजित पद्मरागौ
बाह्यैर्महोभिरभिभूतमहेन्द्रनीलौ ।
उद्यन्नखांशुभिरुदस्तशशांकभासौ
श्रीवेकटेशचरणौ शरण प्रपद्ये ।।

सप्रेमभीति कमलाकरपल्लवाभ्यां
संवाहनेऽपि सपदि क्लममादधानौ ।
कांतावबाङ्मनसगोचर सौकुमार्यौ
श्रीवेंकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

लक्ष्मीमहीतदनुरूप निजानुभाव
नीलादिदिव्यमहिषीकरपल्लवानाम् ।
आरुण्यसंक्रमणतः किल सान्द्ररागौ
श्रीवेंकटेश चरणौ शरण प्रपद्ये ।।

नित्यानमद्विधि शिवादि किरीटकोटि
प्रत्युप्तदीप्त नवरत्न मह. प्ररोहै. ।
नीराजनाविधिमुदारमुपादधानौ
श्रीवेंकटेशचरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

१० 'विष्णोः पदे परम' इत्युदित प्रशंसौ
यौ 'मध्व उत्स' इति भोग्यतयाऽप्युपात्तौ ।
भूयस्तथेति तव पाणितल प्रदिष्टौ
श्रीवेकटेश चरणौ शरण प्रपद्ये ।।

११ पार्थाय तत्सदृश सारथिना त्वयैव
यौ दर्शितौ स्वचरणौ शरणं व्रजेति ।
भूयोऽपि मह्यमिह तौ करदर्शितौ ते
श्रीवेकटेश चरणौ शरण प्रपद्ये ।।

१२. मन्मूर्ध्नि कालियफणे विकटाटवीषु
श्रीवेकटाद्रिशिखरे शिरसि श्रुतीनाम् ।
चित्तेऽप्यनन्यमनसां सममाहितौ ते
श्रीवेंकटेश! चरणौ चरणं प्रपद्ये ।।

१३. अम्लानहृष्यदवनीतलकीर्ण पुष्पौ
श्रीवेकटाद्रि शिखराभरणायमानौ ।
आनदिताखिलमनोनयनौ तवैतौ
श्रीवेकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

१४. प्रायः प्रसन्नजनता प्रथमावगाह्यौ
मातुः स्तनाविव शिशोरमृतायमानौ ।
प्राप्तौ परस्परतुलामयलांतरौ ते
श्रीवेकटेश चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

१५. सत्त्वोत्तरैस्सततसेव्यपदांबुजेन
ससारतारकदयार्द्रदृगंचलेन ।
सौम्योपयंतृमुनिना मम दर्शितौ ते
श्रीवेकटेश! चरणौ शरणं प्रपद्ये ।।

१६ श्रीश! श्रिया घटिकयात्वदुपाय भावे
प्राप्ये त्वयि स्वयमुपायतया स्फुरंत्या ।
नित्याश्रिताय निरवद्यगुणाय तुभ्यं
स्यां किंकरो वृषगिरीश न जातु मह्यम् ।।

।। इति श्री वेंकटेश प्रपत्तिः ।।

(क्रमशः)

ग्राहकों से निवेदन

निम्नलिखित सख्यावाले ग्राहकों का चदा ३०–६–७९ को खतम हो जायगा । कृपया ग्राहक महोदय अपना चंदा रकम मनीआर्डर के द्वारा जल्दी ही भेज दें ।

H 38 39 74 to 79 82 to 86

निम्नलिखित पते पर चंदा रकम भेजें :

संपादक,
ति· ति देवस्थानम्,
तिरुपति.

श्री वेङ्कटेश्वरस्वामीजी का मंदिर, तिरुमल.

अर्जित सेवाओं की दरें

विशेष दर्शन ... रु. 25—00

सूचना — एक टिकट के द्वारा एक ही दर्शनार्थी भगवान के दर्शन प्राप्त कर सकेगा ।

I. सेवाएँ :—

१	अमत्रणोत्सव	रु.	200	७	जाफरा बरतन (Vessel)	रु	100
२.	पूलगि	.	60	८	सहस्रकलशाभिषेक		2500
३	पूरा अभिषेक	.	450	९	अभिषेक कोइल आलवार		1745
४	कर्पूर बरतन (Vessel)		250	१०	तिरुप्पाबडा		5000
५	पुनुगु तेल का बरतन (Vessel)	.	100	११	पवित्रोत्सव		1500
६	कस्तूरि बरतन (Vessel)	..	100				

सूचना – सेवासख्या१ — इस सेवा में दो व्यक्ति ही दर्शन प्राप्त कर सकेंगे । जिस दिन प्रात: काल तोमाल सेवा और अर्चना की है केवल उसी दिन रात में एकान्तसेवा के लिए भी भक्त दर्शनार्थ जा सकते है ।

सेवा क्रमसंख्या २–यह सेवा केवल गुरुवार की रात को मनायी जाती है । केवल 2 व्यक्ति ही दर्शन पाप्त कर सकेंगे ।

सेवा क्रमसंख्या ३–७ — केवल शुक्रवार को मनायी जाती है । इन सेवाओ के लिए प्रवेश इस प्रकार होगा —

क्रमसख्या ३ – गिन्ने के साथ केवल २ व्यक्ति ।
४ – गिन्ने के साथ केवल २ व्यक्ति ।
५ – ७ – गिन्ने के साथ केवल एक व्यक्ति ।

सेवा क्रमसख्या ८ – १० – प्रत्येक सेवा सम्पूर्ण दिन का उत्सव है । सेवा करानेवाले भक्त को प्रसाद दिया जायगा, जिस में बडा, लड्डू, पापड, दोसा इत्यादि होगें । इस के अतिरिक्त सेवा न. ८ के लिए वस्त्र भी भेंट के रूप में दिया जायगा । सहस्र कलशाभिषेक, तिरुप्पाबडा तथा पवित्रोत्सव सेवाओ में हर एक सेवा को १० व्यक्ति जा सकते है ।

साधारण सूचना.–रिवाजो के अनुसार दातम (Datham) और आरती के लिये एक रुपये का अतिरिक्त शुल्क अदा करना पडेगा ।

II उत्सव :—

१.	वसन्तोत्सव	रु	2500	४.	प्लवोत्सव	रु	1500
२.	कल्याणोत्सव		1000	५	ऊँजल सेवा	.	1000
३	ब्रह्मोत्सव	.	750				

सूचना :– १. वसन्तोत्सव :– जो भक्त वसन्तोत्सव मनाना चाहते हैं उनकी सुविधा के अनुसार और मदिर की सुविधा के अनुसार यह उत्सव तीन दिन अथवा उससे कम दिनो मे मनाया जायगा और उन्हे वस्त्र पुरस्कार मिलेगा ।

२. ब्रह्मोत्सव :– इस उत्सव को जो यात्री मनाना चाहते है अपने साथ ६ साथियो को ला सकते है, तथा तोमालसेवा, अर्चना और रात को एकान्तसेवा में भाग ले सकते है। यह उत्सव तीन दिन तक अथवा उससे कम दिनो में यात्री की सुविधा के अनुसार और मदिर की सुविधा के अनुसार मनाया जायगा । उत्सव के दिनो में उस के मनानेवाले को पोगल और दोसा इत्यादि प्रसाद भी दिये जायेगें । उत्सव के अन्त में वस्त्र पुरस्कार दिया जायगा ।

३. कल्याणोत्सव या श्रीस्वामीजी के विवाहोत्सव के अन्त में वस्त्र पुरस्कार और लड्डू, बडा, पापड, दोसा आदि नियमानुसार प्रसाद के साथ दिये जायेंगे ।

III. वाहन सेवाएं :–

१ वाहन सेवा सर्वभूपाल वज्रकवच सहित ७२+१ (आरती)	रु.	73
२. वज्रकवचसहित वाहनसेवा स्वर्ण गरुडवाहन, कल्पवृक्ष, बडा शेषवाहन, सर्वभूपाल, सूर्यप्रभा, प्रत्येक ६२+१ (आरती)	...	63
३ चाँदी गरुडवाहन, चन्द्रप्रभा, गज (हाथी) वाहन, अश्ववाहन, सिंहवाहन, हसवाहन, प्रत्येक ३२+१ (आरती)	..	33

सूचना :– वाहनसेवा मनानेवाले गृहस्थ को प्रसाद में एक बडा दिया जायगा ।

साधारण सूचना :– न ३ और ४ के लिये दातम और आरती के लिये समय और रिवाजानुसार एक एक रुपये का अतिरिक्त शुल्क अदा करना होगा ।

IV भगवान को प्रसाद (भोग) समर्पण (१/४ सोला) :–

१. दहीभात	रु	40	४. शक्करपोगलि	रु.	65	७ शक्करभात	रु.	85
२ बघार भात	...	50	५ केसरीभात	...	90	८ शीरा	...	155
३. पोगलि(घी और मिर्चभात)		55	६. पायसम (खीर)	...	85			

सूचना :—भोग के बाद प्रसाद भक्त को दिये जायेंगे । भोग के बाद अपने प्रसादो को भक्त लोग आकर अपने बर्तन में स्वीकार करेगें ।

V. पक्वान्नों की भेंट :—

१. लड्डू	रु.	450	४ दोसै	रु	100	७. सुखी	रु	200
२. बडा	..	250	५ पापड	..	230	८ जिलेबी	..	450
३. पोली	.	225	६ तेनतोल	.	200			

सूचना .—जो गृहस्थ उपर्युक्त पक्वानो की भेंट देते है उन्हे भोग के बाद ३० पनियारम दिये जायेगें । प्रसाद-पन्यारम को गृहस्थ स्वय आकर मन्दिर से ले जा सकते है । भोग के बाद मन्दिर की दूसरी घटी बजते ही प्रसाद पन्यारम दिया जायगा ।

VI. नित्य सेवाएं :—

१ नित्य कर्पूर हारती रु. 21   २. नित्य नवनीत आरती रु. 42   ३ नित्य अर्चना रु 42

सूचना :—नित्य सेवाओ के लिये प्रथम वर्ष में अतिरिक्त रूप से देय शुल्क वर्ष के पहले हर एक सेवा के लिए अग्रिम के रूप में देना पडेगा । जो भक्त इन नित्य सेवाओ को मनाते है उनको भगवान के दर्शन केलिए प्रवेश नही मिलेगा । भक्तो की अनुपस्थिति मे ही उनके नाम पर इन सेवाओ को सपन्न किया जायगा ।

—

देवस्थान के नूतन कार्यक्रम भवन का उद्घाटन समारोह

दिनांक २०–४–७९ के शामको ७–४० बजे श्री वीरमाचनेनी वेंकटनारायण, माननीय प्रणालिका तथा देवादाय शाखामंत्री महोदय ने नूतन कार्यालय भवन का उद्घाटन किया। उक्त अवसर पर भाषण देते हुए कहा कि यात्रियों की अधिक सेवा करना कर्मचारियो का कर्तव्य है। और अविनीति से भी दूर रहना चाहिए। बाद को श्री नेदुनूरी कृष्णमूर्तिजी (गात्र) तथा श्री लालुगुडी जयरामन (वायोलिन) को आस्थान संगीत विद्वान के पद से सम्मानित किया। अनतर देवस्थान के टेलिफोन एक्चेन्ज का भी प्रारम्भोत्सव किया।

श्री पी. वी आर. के प्रसादजी, कार्यनिर्वहणाधिकारी ने अपने स्वागतोपन्यास में कहा कि कार्यालय को इतने बड़े भवन की आवश्यकता जरूर है क्योंकि कर्मचारी भी जल्दी से जल्दी अपने कार्यो को अच्छी तरह कर सके जिससे कि यात्रियों को सुविधा हो। इसका निर्माण ११,००० च मी में हो रहा है तथा अब तक इसका खर्च रु. ६२ लाख हैं। पहली मंजिल के निर्माण पूरा होने के बाद धार्मिक ग्रंथालय खोलने की योचना के बारे में बतायी।

डा० एन रमेशन, आई ए एस. अध्यक्ष ति ति. देवस्थान के न्यास मण्डल तथा सभाध्यक्ष भाषण देते हुए कहा कि भवन का आकार मंदिर जैसे हो तो कर्मचारियो में भी सेवा करने की पवित्र भावना रहेगी। और अधिकारियो तथा कर्मचारियों को यात्रियो की सेवा करना चाहिए। तभी इसका आशय सफल होगा, अन्यथा पूरा खर्चा बेकार हो जायगा। अन्नमाचार्य की कीर्तनाओं को जल्दी से जल्दी प्रकाशित करके प्रचार करना चाहिए।

सभा का प्रारम्भ श्री नेदूनूरि कृष्णमूर्तिजी (गात्र) श्रीलालुगुड़ी जयरामन (वायोलिन) तथा श्री नेल्लूर जि. रामभद्रन (मृदग) को संगीत गोष्ठी से हुआ। वे अपने गीतों से श्रोताओं को मधुर-मुग्ध किये।

श्री एन नरसिंहारावजी, उपकार्यनिर्वहणाधिकारी के वंदन समर्पण से कार्यक्रम समाप्त हुए।

नूतन कार्यालय भवन में स्टेट बैंक आफ इंडिया की शाखा का प्रारम्भोत्सव

दि० १७–४–७९ को ति ति. देवस्थान के नूतन कार्यालय भवन में श्री पी. वी. आर के प्रसादजी, आई. ए. एस कार्यनिर्वहणाधिकारी ने स्टेट बैंक आफ इंडिया की शाखा का उद्घाटन किया।

नंद्याला में ति. ति. देवस्थान का कल्याण मंडप

दिनांक २–४–७९ को नंद्याला में रु. १० लाख की खर्चा से बनाये जानेवाले कल्याण मंडप को विधान मण्डली के सदस्य तथा ति ति. देवस्थान के न्यास मण्डल के सदस्य श्री महानंद रेड्डी जी ने नींवडाला।

रु ५ लाख से बनाये जानेवाले ति. ति. देवस्थान के समाचार केन्द्र को श्री पी वी. आर के. प्रसादजी, आई. ए एस, कार्यनिर्वहणाधिकारी ने नींवडाला।

उपरोक्त कार्यक्रम श्री एन. एस. हरिहरन, कर्नूल जिला कलेक्टर की अध्यक्षता में सम्पन्न हुए।

श्रीकालहस्थि में ति. ति. देवस्थान का कल्याण मण्डप

श्री वीरमाचनेनी वेंकटनारायण, माननीय देवादाय शाखा मंत्रीजी ने दि० २१–४–७९ को श्रीकालहस्ति में कल्याण मंडप की उद्घाटन किया। जिसकी खर्चा रु. ५ १३ लाख हुआ। श्री पी. वी आर. के. प्रसादजी कार्यनिर्वहणाधिकारी अध्यक्ष थे।

ति. ति. देवस्थान के न्यास मण्डल के सदस्य श्री माधवरावजी ने मंत्री को स्वागत करते हुए, न्यासमण्डल के सदस्यों को इस बात के लिए धन्यवाद दिये।

श्री वी. सुब्रह्मण्यम् नायुडु, विधान सभा के सदस्य ने अपने भाषण में कहा कि इसके पहले शादी करना है तो तिरुचानूर या तिरुपति को जाना पडता था। लेकिन अब लोगो की सुविधा केलिए जिला के मुख्य शहरो में बनायी जानेवाले कल्याणमंडपो की इस पद्धति को प्रशंसा की।

ताल्लपाक ग्राम को दत्तक ग्रहण करने का समारोह

पदकविता पितामह तथा भक्त शिरोमणि ताल्लपाक अन्नमाचार्य, जिन्होंने भगवान बालाजी के ऊपर ३२,००० कीर्तनाओं को रचे थे, उनके जन्मस्थल ताल्लपाक ग्राम (राजपेट तालुक, कड़पा जिले) को ति. ति देवस्थान ने दिनांक ४–४–७९ को दत्तक ग्रहण किया। श्री चंद्रशेखर, ति ति देवस्थान के न्यास मण्ड़ल के सदस्य सभाध्यक्ष थे।

श्री पी. वी. आर. के. प्रसादजी, कार्यनिर्वहणाधिकारी ने अपने प्रसंग में कहा कि संवत् १४०८–१५०८ के बीच जीवित अन्नमय्या के जन्मस्थल ताल्लपाक ग्राम को दत्तक ग्रहण करने को न्यास मण्ड़ल के सभी सदस्य ने अनुमति दी। श्री वेंकटेश्वर यूनिवर्सिटी में अन्नमय्या के साहित्य बिभाग खोलने की आवश्यकता है।

श्री कामिसेट्टि श्रीनिवासुलु सेट्टीजी ताल्लपाक अन्नमय्या के जीवन तथा साहित्य-सेवा के बारे में संक्षेप में बताया।

बाद को ति. ति. संगीत नृत्य कलाशाला के प्रिन्सिपाल श्री ड़ी. पशुपतिजी से संगीत-गोष्ठी तथा सुभद्रा कल्याण नृत्य नाटिका का प्रदर्शन हुआ।

ति. ति. देवस्थान के न्यास मण्डल के प्रमुख निर्णय

१) धार्मिक कार्यक्रम चलाने का अधिकार देवस्थान को रहना २) देवस्थान के कर्मचारी तथा न्यास-मण्डल के सदस्यों को जब कभी आये तो मुफत में रहने का प्रबंध करना ३) धर्मशालाओं की देख-रेख, मरम्मत या अन्य किसी प्रकार की खर्चा देवस्थान के न निर्वाह करने के पक्ष में ४) न्यास मण्डल के सदस्यों के नामों के शिलापटों को हर दो दो साल को रंग डालना, चार साल को नये शिलापट बनवाना ५) पहले के बनाया हुआ नियम पत्र (agreement) के अलावा भवन को गिराना या और किसी का के लिए उपयोग करना है तो देवस्थान की अनुमति लेना ६) ति. ति. देवस्थान के समाचार केन्द्र को अगर रखें तो उस को तथा उसके कर्मचारियों को शाश्वत आवास प्रबंध-इन नियमों पर ति. ति. देवस्थान के धर्मशालाओं को अन्य देवस्थानों को भाडे पर देने का निर्णय लिया गया।

अब के जैसे सोने को नीलाम करने के बदले, श्री बालाजी के चिह्न डालकर ५ ग्रा या १० ग्रा के पतक बनवाकर, हर महीने की पहली तारीख को प्रमुख समाचार पत्रों में विज्ञापन देकर, मद्रास के सोने की बाजार की दर पर ५ प्रतिशत जोडकर बेचने का निर्णय लिया गया।

देवस्थान में काम करनेवाले सेक्यूरिटी गार्ड को रु० १६५–५–१९०–६–२५० तथा जमेदारों को रु० १७५–७–२७५ के, उनके वेतन निवृत्ति वेतन (Pension) से बिना सम्बन्ध रखे देने का निर्णय लिया गया।

श्री धूलिपाल रामचन्द्र शास्त्रीजी को तिरुमल के श्री वेंकटेश्वर वेद शास्त्रागम विद्या केन्द्र के अध्यक्ष पद पर रु० ७००–२५–८५०–४०–९५०–३०–१००० के वेतनपर नियक्ति करने का निर्णय लिया गया।

सरकार को स्थानंतरित होकर जानेवाले श्री पी. सुब्बाराव जी की जगह में श्री वै. कृष्णमूर्तिजी को देवस्थान के स्वास्थाधिकारी नियुक्त करने का निर्णय लिया गया।

श्री त्यागराज धर्म संस्था के अध्वर्य में हर साल मनाये जानेवाले सभी कार्यक्रम के साथ रु० २५,००० के दान देने का निर्णय लिया गया।

मंगापुरम के श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामीजी के मंदिर के पुरोहित जो देवस्थान के अधीन के पहले से निस्वार्थ सेवाभाव से भगवान की पूजा करने रहें तथा दिनांक २–२–७९ को स्वर्गस्थ हुए श्री ए. सी. आर. सुदरराजस्वामीजी के परिवार को पारिवारिक सहायक प्रणाली से रु० २०,००० देने का निर्णय लिया गया।

श्री वेंकटेश्वर प्राच्य कलाशाला में १२० लोग बैठने की सुविधाजनक सभा भवन बनवाने का निर्णय लिया गया।

आर्ष संस्कृति कार्यक्रमों केलिए १९७९–८० वर्ष को रु० २,००,००० देने का निर्णय लिया गया।

श्री काकुल में कामाक्षम्मा तथा एकांबरेश्वर स्वामीजी के मंदिरों के अहाते की दीवार (Compound wall) बनवाने के लिए रु० २५,००० देने का निर्णय लिया गया।

हिन्दू धर्म प्रतिष्ठान सघ के खर्च के लिए १९७९–८० को रु० ८,५०,००० देने का निर्णय लिया गया।

हरिजन तथा गिरिजन लोगों की बस्तियों में ३० राममंदिरों के निर्माण करवाने का निर्णय लिया गया।

पू० गो० जिले के पिठापुरम के कुक्कुटेश्वर स्वामीजी के मंदिर के पास, ८ कमरों के भवन बनवाने के लिए रु. १,००,००० देने का निर्णय लिया गया।

कांचीपुरम के श्री एकांबर नाथ स्वमीजी के मंदिर के निकट ति. ति. देवस्थान के के समाचार केन्द्र को खोलकर यू. डी. सी., एल. डी. सी. और अटेण्डर की नियुक्ति करना तथा १० कमरों की धर्मशाला बनवाने का निर्णय लिया गया।

तिरुचानूर के तोलप्पा गार्डेन के मकान के सामनेवाले कल्याण मंडप के हर दिन के भाडे को रु० ५० से रु० १०० को बढाने का निर्णय लिया गया।

वारसत्व नियमाध्ययन वेद वेदांग शिक्षण प्रणाली के अंतर्गत आ० प्र० के १० छात्रों को शिक्षण देने का निर्णय लिया गया।

मासिक राशिफल

मई १९७९

*डा० डी. अर्कसोमयाजी, तिरुपति.

मेष

(अश्वनी, भरणी, कृत्तिका केवल पाद-१)

राहु के द्वारा अशाति । शनि के द्वारा झगडे थ धनहानि और संतान के कारण आदोलन । गुरु के द्वारा रिश्तेदारो से अशाति । कुज के द्वारा धन हानि । शुक्र के द्वारा १२ तक कष्ट, बाद को प्रेम तथा शृगार । रवि के द्वारा २५ तक धनहानि या प्रयाण या उदरपीडा, बाद को धनहानि या नेत्रपीडा । बुध के द्वारा झगडे या धनहानि ।

वृषभ

(कृत्तिका पाद-२, ३, ४, रोहिणी, मृगशिरा पाद-१,२)

राहु के द्वारा झगडे । शनि के द्वारा धनहानि या मित्रो के कारण अशाति या सतान से अलगाव गुरु के द्वारा अशाति । कुज के द्वारा ७ तक विजय, बाद को धनहानि । रवि के द्वारा २५ तक आदोलन, बाद को धनहानि, प्रयाण या उदरपीडा । बुध के द्वारा ७ तक धन-प्राप्ति, सतोष, बाद को १३ तक झगडे अशाति, शत्रुओ का डर, बाद को धनहानि, बुरे सलाह के कारण झगडे । शुक्र के द्वारा ७ तक धन प्राप्ति तथा मित्र, बाद को अशाति ।

मिथुन

(मृगशिरा पाद-३, ४, आर्द्रा, पुनर्वसु पाद-१,२,३)

राहु के द्वारा धन प्राप्ति । शनि के द्वारा स्वास्थ्य, धन-प्राप्ति तथा घर मे सतोष । गुरु के द्वारा धन प्राप्ति । रवि के द्वारा २५ तक धन प्राप्ति, विजय व गौरव, बाद को अशाति । शुक्र के द्वारा २२ तक झगडे व अपमान, बाद को धन प्राप्ति व नूतन मित्र । बुध के द्वारा २३ तक धन प्राप्ति व प्रेम, बाद को अशाति व शत्रुओ का डर । कुज के द्वारा धन प्राप्ति व विजय ।

कर्काटक

(पुनर्वसु पाद-४, पुष्य तथा आश्लेष)

राहु के द्वारा धनहानि । शनि के द्वारा धन हानि। गुरु से झगडे या अपमान व धन हानि । रवि के द्वारा भलाई तथा अन्य ग्रहो की बुराई को कम करना। शुक्र के द्वारा २२ तक सतोष व धार्मिक कार्यक्रम, धन प्राप्ति व नूतन वस्त्र प्राप्ति, बाद को झगडे व अपमान। कुज के द्वारा ७ तक धन हानि व अगौरव, बाद को धन प्राप्ति । बुध के द्वारा ७ तक अशाति, बाद को धन-प्राप्ति मित्र व प्रेम व सतोष ।

सिंह

(उत्तर फल्गुनि पाद-१, मख, पूव फल्गुनि)

राहु तथा शनि के द्वारा अशाति या सतान के प्रति विरोध या प्रयाण व प्रयास । गुरु के द्वारा प्रयाण व प्रयास । रवि के द्वारा २५ तक अशाति व धनहानि, बाद को बिजय व शुभ । कुज के द्वारा पूरे महीने धनहानि व झगडे । शुक्र के द्वारा २२ तक प्रयाण व प्रयास या अशाति, बाद को विजय, खाद्यपदार्थ, धन प्राप्ति व सतान प्राप्ति । बुध के द्वारा ७ तक धन प्राप्ति, नूतन वस्त्र प्राप्ति व संतान, बाद को २३ तक अशाति, उसके बाद धन प्राप्ति, शृगार व शत्रुहानि ।

कन्या

(उत्तरा पाद-२,३,४, हस्त चित्त पाद-१, २)

राहु तथा शनि के द्वारा अशाति व आदोलन । गुरु के द्वारा धनप्राप्ति या ऊँचे पद । कुज के द्वारा ७ तक पत्नी से झगडे या नेत्र पीडा या उदरपीडा, बाद को धनहानि अपमान । रवि के द्वारा २५ तक आदोलन व पत्नी के असतोष, बाद को धन हानि व अशाति तथा आदोलन । शुक्र के द्वारा २२ तक स्त्री के कारण अशाति, बाद को प्रेम, नूतन वस्त्र प्राप्ति व घर प्राप्ति । बुध के द्वारा ७ तक झगडे, बाद को २३ तक विजय या नूतन वस्त्र था धन प्राप्ति व सतान प्राप्ति बाद को अशाति व आदोलन ।

तुला

(चित्त पाद-३, ४, स्वाति, विशाख पाद-१, २, ३)

राहु के द्वारा सतोष । शनि के द्वारा धन प्राप्ति प्रेम । गुरु के द्वारा धनहानि तथा पदस्युति । शुक्र के द्वारा २२ तक अस्वस्थता व अपमान, बाद को स्त्री के कारण दु ख । रवि के द्वारा महीने के पहले भाग मे प्रयाण तथा उदर पीडा, बाद को पत्नी का असंतोष तथा अस्वस्थता । कुज के द्वारा ७ तक धन प्राप्ति, विजय व स्वास्थ्य, बाद को पत्नी से झगडे, नेत्र पीडा या उदर पीडा । बुध के द्वारा ७ तक धनप्राप्ति, दर्जा, बाद को २३ तक झगडे, उसके बाद धन-प्राप्ति, नूतन वस्त्र प्राप्ति व संतान प्राप्ति ।

वृश्चिक
(विशाख पाद-४, अनुराधा, ज्येष्ठ)

राहु के द्वारा झगड़े। शनि के द्वारा धन हानि तथा अपमान। गुरु के द्वारा धन प्राप्ति, विजय, खद्यपदार्थ प्राप्ति व सतान प्राप्ति। शुक्र के द्वार २२ तक धन प्राप्ति या सतान प्राप्ति या रिश्तेदारो का आगमन या बडो की प्रशसा, बाद को अस्वस्थता, गौरवहानि। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग मे स्वास्थ्य व विजय, बाद को प्रयाण [illegible] पीडा। कुज के द्वारा ७ तक अस्वस्थता, सतान के द्वारा आदोलन या शत्रु पीडा, बाद को धन प्राप्ति, विजय। बुध के द्वारा ७ तक पत्नी और संतान से झगडे, बाद को २३ तक धन प्राप्ति व दर्जा, बाद को विजय या धन प्राप्ति या नूतन वस्त्र प्राप्ति या सतान प्राप्ति।

धनुः
(मूल, पूर्वाषाढ, उत्तराषाढ पाद-१)

राहु के द्वारा पापकार्य। शनि के द्वारा शत्रु भय, अस्वस्थता या अधर्म प्रवर्तन। गुरु के द्वारा प्रयाण, प्रयास व अस्वस्थता। कुज के द्वारा ७ तक बुखार, उदर पीडा शत्रुओ का डर, बाद को सतान से आदोलन या अस्वस्थता। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग मे शत्रु भय व अस्वस्थता, बाद को स्वास्य तथा शत्रुओ पर विजय। बुध के द्वारा ७ तक घर मे वस्तु प्राप्ति, बाद को २३ तक पत्नी और सतान से झगडे, बाद को विजय, धन प्राप्ति या दर्जा। शुक्र के द्वारा १२ तक मित्र प्राप्ति व उत्साह, बाद को रिश्तेदारो का आगमन, धन प्राप्ति व बडो की प्रशसा।

मकर
(उत्तराषाढ पाद-२, ३, ४ श्रवण, धनिष्ठ पाद-१, २)

राहु के द्वारा अशाति। शनि के द्वारा पत्नी तथा सतान के अलगाव। गुरु के द्वारा धनप्राप्ति, प्रेम व सुख। रवि के द्वारा अस्वस्थता, शत्रुओ का डर। शुक्र के द्वारा परे महीने धन-प्राप्ति, गौरव, नूतन वस्त्र व मित्र प्राप्ति। कुज के द्वारा ७ तक अक्रम पद्धति से धन व सतान से लाभ, बाद को बुखार या उदर पीडा या बुरे मित्रो के कारण आदोलन। बुध के द्वारा ७ तक मित्र प्राप्ति होने पर भी बुरे प्रवर्तन से नौकरी मे आदोलन, बाद को २३ तक नूतन वस्त्र प्राप्ति, बाद को पत्नी और सतान से झगडे।

कुंभ
(धनिष्ठ पाद-३,४, शतभिष, पूर्वाभाद्रा पाद-१, २, ३.)

राहु के द्वारा झगडे। शनि के द्वारा प्रयाण। गुरु के द्वारा अशाति। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग मे उच्च पद या धन प्राप्ति, बाद को अस्वस्थता। कुज के द्वारा नौकरी में अशाति, शत्रुओ का डर, चोरी के कारण आदोलन, बाद को अक्रम पद्धति से धनप्राप्ति या सतान से धन प्राप्ति। शुक्र के द्वारा धन प्राप्ति, खाद्यपदार्थ प्राप्ति, अधिकारियो की प्रशसा, या सतान प्राप्ति व नूतन वस्त्र प्राप्ति। बुध के द्वारा ७ तक अपमान, धन प्राप्ति, बाद को २३ तक शत्रुओ का डर तथा बुरे व्यवहार के कारण भय, बाद को घर मे नूतन वस्त्र प्राप्ति।

मीन
(पूर्वाभाद्र पाद-४, उत्तराभाद्र, रेवती)

राहु के द्वारा धन प्राप्ति। शनि के द्वारा स्वास्थ्य व विजय। गुरु के द्वारा धन, नूतन वस्त्र प्राप्ति या वाहन व गृह व सतान प्राप्ति। रवि के द्वारा महीने के पहले भाग में धनहानि, दूसरे भाग में धन प्राप्ति तथा गौरव। कुज के द्वारा झगडे, नौकरी मे आदोलन, चोरी के कारण धन हानि। शुक्र के द्वारा २२ तक प्रेम तथा सतोष, बाद को धन, खाद्यपदार्थ प्राप्ति व बडो की प्रशसा या सतान प्राप्ति। बुध के द्वारा ७ तक बुरे सलाह के कारण धनहानि, २३ तक अपमान, बाद को मित्र प्राप्ति होने पर भी दुष्प्रवर्तन के कारण भय।

सूचना

हमें पता चला कि कुछ लोग दुर्भाग्य से श्री भगवान बालाजी के नाम पर असंभव घटनाओं को तथा झूठी कहानियों को छपवाकर भक्तजनों को बांटकर धोखे दे रहे हैं। अतः आप लोगों से हमारी प्रार्थना है कि कृपया ऐसी बातों पर विश्वास मत कीजिए।

ति. ति. देवस्थान,
तिरुपति.

EDITED AND PUBLISHED ON BEHALF OF THE T. T. DEVASTHANAMS BY K. SUBBA RAO, M A. AND PRINTED AT
T. T. D. Press, By M. Vijayakumar Reddy, Manager, T. T. D Press, Tirupati

नारायणवन का दर्शन कीजिए!!

गरुडोत्सव के अवसर पर श्रीकल्याण वेंकटेश्वरस्वामीजी

श्री कल्याण वेंकटेश्वर स्वामीजी का ब्रह्मोत्सव, नारायणवन

दिनांक	वार	प्रातः	रात
५–६–७९	मंगलवार	— —	सेनाधिपति का उत्सव, अंकुरार्पण
६–६–७९	बुधवार	तिरुच्चि उत्सव, ध्वजारोहण	बडा शेष वाहन
७–६–७९	गुरुवार	छोटा शेष वाहन	हंसवाहन
८–६–७९	शुक्रवार	सिंहवाहन	मोती के शामियाने का वाहन
९–६–७९	शनिवार	कल्पवृक्ष वाहन	सर्वभूपाल वाहन
१०–६–७९	रविवार	मोहिनी अवतार	गरुड वाहन
११–६–७९	सोमवार	हनुमान वाहन, शाम को वसंतोत्सव	गज वाहन
१२–६–७९	मंगलवार	सूर्यप्रभा वाहन	चन्द्रप्रभा वाहन
१३–६–७९	बुधवार	रथोत्सव	अश्व वाहन
१४–६–७९	गुरुवार	पालकी उत्सव, चक्रस्नान	ध्वजावरोहण

तिरुपति का दर्शन कीजिए!!
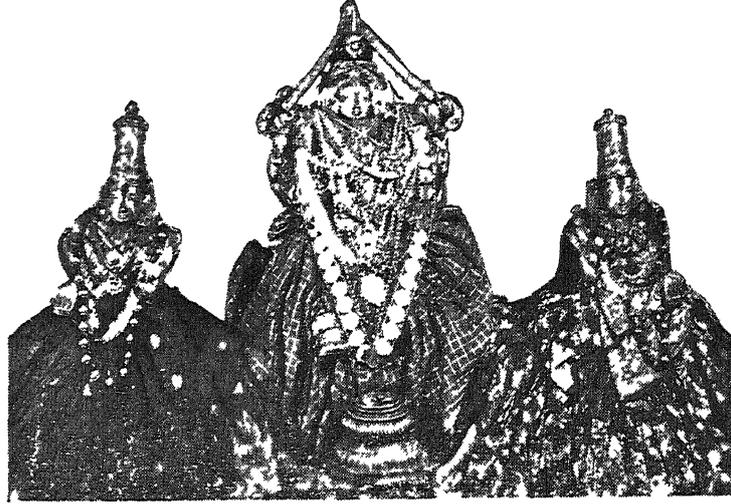
श्री गोविन्दराज स्वामीजी का ब्रह्मोत्सव, तिरुपति.

दिनांक	वार	प्रात	रात
३१-५-७९	गुरु	—	अंकुरार्पण - श्री सेनाधिपति के उत्सव
१-६-७९	शुक्र	तिरुच्चि उत्सव, ध्वजारोहण	बडा शेषवाहन
२-६-७९	शनि	छोटा शेषवाहन	हंसवाहन
३-६-७९	रवि	सिंहवाहन	मोती के शामियाने का वाहन
४-६-७९	सोम	कल्पवृक्षवाहन	सर्वभूपालवाहन
५-६-७९	मंगल	मोहिनी अवतारोत्सव	गरुडोत्सव
६-६-७९	बुध	हनुमानवाहन शाम को वसंतोत्सव	गजवाहन
७-६-७९	गुरु	सूर्यप्रभावाहन	चन्द्रप्रभावाहन
८-६-७९	शुक्र	रथोत्सव	अश्ववाहन
९-६-७९	शनि	१. पालकी उत्सव— २. तिरुच्चि उत्सव	ध्वजावरोहण